

सितंबर
2024



धर्म एवं अध्यात्म के तत्त्वज्ञान का वैज्ञानिक विश्लेषण

अखण्ड ज्योति

वर्ष
88

अंक-9

| प्रति- ₹ 25

| ₹-300 वार्षिक

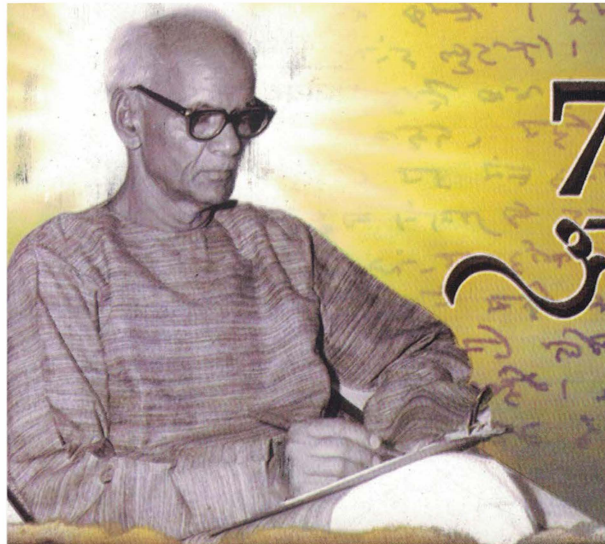


05 ► दृष्टिकोण के परिवर्तन से अरे जहान बदल सकता है

12 ► संवेदना का साकार स्वरूप - वंदनीया माताजी

21 ► अमूल्य निधि है संगीत

61 ► धरती पर प्रकाश की प्रतीक्षा



75 वर्ष पूर्व अखण्ड ज्योति

सितंबर-1949

(पृष्ठ - 16)



गायत्री-साधना से शक्तिकोशों का उद्भव

कई व्यक्ति सोचते हैं-“हमारा उद्देश्य ईश्वरप्राप्ति, आत्मदर्शन और जीवनमुक्ति है, हमें गायत्री के सूक्ष्मप्रकृति के चक्कर में पड़ने से क्या प्रयोजन? हमें तो केवल ईश्वर - आराधना करनी चाहिए।” ऐसा सोचने वालों को जानना चाहिए कि ब्रह्म सर्वथा निर्विकार, निर्लेप, निरंजन, निराकार और गुणातीत है। वह न किसी से प्रेम करता है न द्वेष। वह केवल द्रष्टा एवं कारण रूप है। उस तक सीधी पहुँच नहीं हो सकती। क्योंकि जीव और ब्रह्म के बीच में सूक्ष्मप्रकृति का सघन आच्छादन है। इस आच्छादन को से ही कार्य करना पड़ेगा। मन, ध्यान, सूक्ष्मशरीर, षट्चक्र, इष्ट देव भावना-उपासना, व्रत, अनुष्ठान, निमित्त ही हैं, इन सबको होनी संभव है ? जैसे ऊपर वायुयान की आवश्यकता पड़ती प्रकृतिमूलक आराधना का ही के आवरण में होकर पार जाने पर सच तो यह है कि साक्षात्कार का होता है। इस से ऊपर पहुँचने पर सूक्ष्म इंद्रियाँ और उनकी अनुभव शक्ति भी लुप्त हो जाती हैं। इसलिए मुक्ति और ईश्वर प्राप्ति चाहने वाले भी गायत्री मिश्रित ब्रह्म की-राधेश्याम, सीताराम, लक्ष्मीनारायण की ही उपासना करते हैं।



ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ।

उस प्रणवस्वरूप, दुःखनाशक, सुखस्वरूप, बौद्ध, तेजस्वी, पापनाशक, देवस्वरूप परमात्मा को हम अपनी अंतःत्मा में धारण करें। वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सम्भार में प्रेरित करे।



ॐ वन्दे भगवतीं देवीं श्रीरामाय जगद्गुरुम् ।
पादपद्मे तयोः श्रित्वा प्रणमामि मुहुर्मुहुः ॥

संस्थापक-संरक्षक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
एवं

शक्तिस्वरूपा
माता भगवती देवी शर्मा
संपादक

डॉ० प्रणव पण्ड्या
कार्यालय

बिरला मंदिर के सामने मथुरा-वृंदावन
रोड जयसिंहपुरा, मथुरा (281003)

दूरभाष नं० (0565) 2403940, 2972449
2412272, 2412273

मोबाइल नं०
9927086291
7534812036
7534812037
7534812038
7534812039

समय—प्रातः 10 से सायं 6 तक
कृपया इन मोबाइल नंबरों पर
एस. एम. एस. न करें।

नया ई-मेल :

akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

वर्ष	:	88
अंक	:	09
सितंबर	:	2024
भाद्रपद-आश्विन	:	2081
प्रकाशन तिथि	:	01.08.2024
वार्षिक चंदा		
भारत में	:	300/-
विदेश में	:	2800/-
आजीवन (बीसवर्षीय)		
भारत में	:	6000/-

समर्पित शिष्य

समर्पित शिष्य होना गुरुभक्ति का परिचय है। शिष्य के शिष्यत्व को अनेकों तरह से जाँचा जाता है। कई तरह से उसकी पात्रता की परीक्षा होती है। उसके समर्पण को कसौटी पर बार-बार कसा जाता है। उसके खरेपन में भी खोट निकालकर उसे और भी खरा बनाया जाता है। उसकी शुद्धि को अशुद्ध ठहराकर अधिक शुद्ध किया जाता है। इसके लिए कुटे को कूटा जाता है, पिसे को पीसा जाता है, जले को फिर से बार-बार जलाया जाता है। तराशे हुए को फिर से तराशकर, मँजे हुए को फिर से मँजकर अधिक चमकाया जाता है।

इन सबमें शिष्य केवल अपनी समर्पण साधना से ही स्थिर रह पाता है। पत्थर यदि शिल्पकार के हाथों में समर्पित रहकर छेनी का हर घाव, हथौड़े का हर आघात सहन करता है; तो ही उसमें से सुंदर मूर्ति की शोभा निखरती है। खेत की मिट्टी यदि किसान के कुदाल, फावड़े, हल के हर आघात को सहन करती है, उसके द्वारा डाले गए सड़े गोबर की गंदगी को समर्पित भाव से स्वीकार करती है—तभी वह उर्वर बन पाती है। केवल तभी उसमें 1 दाने को 100 दानों में बदल पाने की सामर्थ्य विकसित होती है।

महासाधक की महासाधना दीर्घ अवधि तक अविराम बनी रही, इसका कारण उनका समर्पित शिष्यत्व ही था। उन्होंने ईश्वरभक्ति के समस्त पाठ गुरुभक्ति की कक्षा में पढ़े। अपने समर्पण से ही वे बीज बनकर गले और वृक्ष बनकर फले। शिष्य अपने अभिमान से अभागा ही रह जाता है; जबकि समर्पण उसे सारे सौभाग्य प्रदान कर देता है। जब शिष्य का संपूर्ण परिचय गुरु बन जाता है, केवल तभी शिष्य—गुरु की पहचान बन पाता है। अपनी समर्पण साधना से स्वयं को शून्य बनाकर शिष्य अपनी चेतना में गुरु की व्यापक विराटता को धारण करता है। युग-परिवर्तन के लिए की गई महासाधना का मर्म मंत्र यही रहा।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

सितंबर, 2024 : अखण्ड ज्योति

विषय सूची

❖ आवरण—1	1	❖ पूज्य गुरुदेव जैसा	
❖ आवरण—2	2	❖ मैंने देखा-समझा—24	
❖ समर्पित शिष्य	3	आचरण की पवित्रता	37
❖ विशिष्ट सामयिक चिंतन		❖ जलचर जीवों का संसार	39
दृष्टिकोण के परिवर्तन से		❖ ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार—185	
अरे जहान बदल सकता है	5	आध्यात्मिक जैव-विविधता का प्रभाव	42
❖ सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है मनुष्य	8	❖ युगगीता—292	
❖ परम शांति का मार्ग	10	त्यागी के कर्मों की दिशा होती है भिन्न	47
❖ पर्व विशेष—परमवंदनीया माताजी		❖ विश्वविद्यालय परिसर से—231	
महाप्रयाण		गणमान्यों के आगमन से धन्य हुआ	
संवेदना का साकार स्वरूप वंदनीया माताजी	12	विश्वविद्यालय	49
❖ हो परिवार जहाँ नंदनवन, वह भू स्वर्ग		❖ परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी	
समान है	16	उपासना का आधार	52
❖ अमूल्य निधि है संगीत	21	❖ साधना शताब्दी-विशिष्ट लेखमाला	
❖ ईश्वरकृपा से सब संभव है	24	धरती पर प्रकाश की प्रतीक्षा	61
❖ स्वाध्याय में प्रमाद न करें	27	❖ अपनों से अपनी बात	
❖ स्वस्थ-नीरोग जीवन के व्यावहारिक सूत्र	29	आत्मपरिष्कार का पथ	64
❖ संस्कारयुक्त शिक्षा का सर्वोच्च प्रतिमान		❖ शांतिकुंज ही क्रांतिकुंज (कविता)	66
देव संस्कृति विश्वविद्यालय	31	❖ आवरण—3	67
❖ निराशा से आशा की ओर बढ़ने का राजमार्ग	35	❖ आवरण—4	68

आवरण पृष्ठ परिचय

स्नेहसलिला, शक्तिस्वरूपा माता भगवती देवी शर्मा के महाप्रयाण दिवस पर भावभरी श्रद्धांजलि

सितंबर-अक्टूबर, 2024 के पर्व-त्योहार

सोमवार	02 सितंबर	कुशाग्रहणी अमावस्या	सोमवार	30 सितंबर	पं० श्रीराम शर्मा आचार्य जयंती
शुक्रवार	06 सितंबर	हरितालिका व्रत	बुधवार	02 अक्टूबर	गांधी, शास्त्री जयंती/
शनिवार	07 सितंबर	श्री गणेश चतुर्थी			सर्वपितृ अमावस्या
रविवार	08 सितंबर	ऋषि पंचमी	गुरुवार	03 अक्टूबर	नवरात्र आरंभ
सोमवार	09 सितंबर	सूर्य षष्ठी	बुधवार	09 अक्टूबर	सूर्य षष्ठी
शनिवार	14 सितंबर	जलझूलनी एकादशी	शनिवार	12 अक्टूबर	विजयादशमी
रविवार	15 सितंबर	वामन जयंती	सोमवार	14 अक्टूबर	पापांकुशा एकादशी
मंगलवार	17 सितंबर	महालयारंभ/विश्वकर्मा जयंती	गुरुवार	17 अक्टूबर	वाल्मीकि जयंती/शरद पूर्णिमा
बुधवार	18 सितंबर	महाप्रयाण दिवस वंद. माताजी	रविवार	20 अक्टूबर	करवा चौथ
शनिवार	21 सितंबर	माता भगवती देवी शर्मा जयंती	रविवार	27 अक्टूबर	रमा एकादशी
गुरुवार	26 सितंबर	मातुनवमी	बुधवार	30 अक्टूबर	धनतेरस
शनिवार	28 सितंबर	इंदिरा एकादशी	गुरुवार	31 अक्टूबर	रूप चतुर्दशी



यह पत्रिका आप स्वयं पढ़ें तथा औरों को पढ़ाएँ। कुछ समय के बाद किसी अन्य पात्र को दे दें, ताकि ज्ञान का आलोक जन-जन तक फैलता रहे। —संपादक

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

दृष्टिकोण के परिवर्तन से अटे जहान बदल सकता है

मौलिकता मानवीय व्यक्तित्व का अगूठा गुण है। हर व्यक्ति अपने भीतर एक मौलिक संभावना को लेकर जन्म लेता है। प्रत्येक व्यक्ति की प्रतिभा, एक भिन्न क्षेत्र व विधा में परिलक्षित होती है। कोई व्यापार में अभिरुचि लेकर जन्म लेता है तो कोई नैसर्गिक रूप से साहित्य के प्रति आकर्षित होता है। किसी को खेल आकर्षित करता है तो किसी को गणित।

वर्षों से यह विषय वैज्ञानिकों के लिए चुनौती का कारण रहा है कि आखिर इस भिन्नता के मूल में क्या है? क्या इनका कारण शारीरिक है अथवा मानसिक? क्या इन मौलिक अभिव्यक्तियों का कारण जीन्स की संरचना जानकर जाना जा सकता है या फिर मात्र पर्यावरण ही इस भिन्नता के लिए जिम्मेदार है।

मानवीय प्रतिभा के विकसित होने के लिए कई वैज्ञानिक आई. क्यू. परीक्षण को अंतिम आधार मानते रहे हैं। यह टेस्ट फ्रांस के मनोवैज्ञानिक अल्फ्रेड बिनेट ने 18वीं सदी में विकसित किया था। आज जिस टेस्ट को सभी लोग एकमत से बौद्धिक श्रेष्ठता का प्रतीक मानते हैं—विडंबना की बात यह है कि उसका निर्माण बिनेट ने उन विद्यार्थियों को ध्यान में रखकर किया था, जो कि पारंपरिक शिक्षा से लाभान्वित नहीं हो पा रहे थे और बिनेट की दृष्टि में उनके लिए एक नई शिक्षा-प्रणाली विकसित करने की आवश्यकता थी।

अपनी पुस्तक 'मॉडर्न आइडियाज एबाउट चिल्ड्रन' में बिनेट ने लिखा भी है कि—'आजकल ज्यादातर चिंतक ये ही सोचते हैं कि मनुष्य की

बौद्धिक क्षमता एक स्थायी गुण है, जिसमें कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता, जबकि सत्य इसके विपरीत है। निरंतर अभ्यास, सही प्रशिक्षण के द्वारा—ऐसा कोई नहीं है, जिसकी मौलिक प्रतिभा का विकास न किया जा सकता हो।'

कुछ ऐसी ही सोच इस सदी के प्रख्यात तंत्रिका विज्ञानी डॉ. गिल्बर्ट गॉटिलेब की भी है, जिन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि 'न केवल जीन और पर्यावरण परस्पर संवाद करते हैं, बल्कि वे एकदूसरे के साथ मिलकर कार्य करते हैं और इन्हीं के सम्मिलित प्रयासों से किसी व्यक्ति की मौलिक प्रतिभा निखरकर आती है।'

प्रश्न उठता है कि ऐसा क्या है जो भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न प्रतिभाओं को निखारने का माध्यम बनता है। आज मनोवैज्ञानिक जिस मानवीय गुण को इसका आधार मानते हैं वो वही है, जिसके विषय में युगमनीषी परमपूज्य गुरुदेव ने वर्षों पहले ही इशारा कर दिया था।

वर्तमान में मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि जो मानवीय गुण, किसी व्यक्ति की प्रतिभा को श्रेष्ठता तक पहुँचाने का काम करता है—वह है दृष्टिकोण। जिन व्यक्तियों का स्वयं के प्रति दृष्टिकोण एक जैसा रहता है, जिसे 'फिक्स्ड माइंड सेट' कह सकते हैं—वे लोग जीवन में मिली संभावनाओं को श्रेष्ठता तक पहुँचा पाने में अक्षम रहते हैं। इसके विपरीत जो लोग अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन करना जानते हैं, जिसे 'ग्रोथ माइंड सेट' कह सकते हैं, वे लोग सामान्य अवसरों को भी उत्कृष्ट अनुदानों में बदल देते हैं।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

इस क्षेत्र में शोध करने वाली मनोवैज्ञानिक डॉ. कैरोल ड्यूक ने जब विभिन्न व्यक्तियों की क्षमताओं का मनोवैज्ञानिक आकलन किया तो उन्होंने पाया कि जो लोग अपने दृष्टिकोण को नहीं बदलना चाहते थे, उनका स्वयं की क्षमताओं के विषय में आकलन बिल्कुल गलत था एवं अन्य लोगों के द्वारा दी गई भ्रांतिपूर्ण रायों पर आधारित था।

डॉ. ड्यूक का कहना है कि यदि दूसरों को दी गई राय सही होती तो डार्विन व टॉलस्टॉय अपनी विधा के विशेषज्ञ कैसे बन पाते? जबकि इन दोनों को ही इनके शिक्षकों ने साधारण समझ कर आगे बढ़ने का अवसर नहीं दिया था।

जो लोग अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन कर सकते हैं, वे लोग सीखने की अद्भुत क्षमता रखते हैं। उन्हें अपनी गलतियों को स्वीकारने में व उनका सुधार करने में कोई दिक्कत नहीं होती। प्रसिद्ध नृत्यांगना मारिया सेम्यानोवा अपने नृत्य विद्यालय में नए विद्यार्थी चुनने के लिए बड़े अद्भुत तरीकों का प्रयोग करती थीं।

वो कई वर्षों तक मात्र ये देखती थीं कि उनके विद्यार्थी निंदा को व सुधार के सुझावों को ले पाने की स्थिति में कितने हैं? जो लोग स्थायी दृष्टिकोण के होते थे—वे अपने बारे में एक ही मत लेकर चलते थे और शिक्षिका की दी गई राय के अनुसार स्वयं को बदलने में उन्हें गंभीर समस्या का सामना करना पड़ता था।

इसके विपरीत जो विद्यार्थी दृष्टिकोण बदलने में विश्वास रखते थे, वे ग्रहणशील होते थे व अपने सुधार की संभावना पर विश्वास रखते थे। मनोवैज्ञानिकों ने जब इन विद्यार्थियों के मस्तिष्क का स्कैन किया तो उन्होंने पाया कि ग्रहणशील मानसिकता के विद्यार्थियों का मस्तिष्क उस समय सबसे ज्यादा सक्रिय था, जब उन्हें कुछ नया सीखने

को मिलता था जबकि दूसरे विद्यार्थी मात्र उस समय रुचि लेते थे, जब उन्हें किसी कार्य के लिए प्रशंसा मिलती थी।

सरल-सी बात है कि दृष्टिकोण के परिवर्तन वाली मानसिकता के लोग, कार्य करने में रुचि रखते हैं, उसके परिणाम में नहीं; जबकि विपरीत मानसिकता के लोग अपना सारा ध्यान प्रशंसा पाने में व परिणाम प्राप्त करने में लगा देते हैं, उसके लिए सही ज्ञान प्राप्त करने व पुरुषार्थ करने में नहीं।

मनोवैज्ञानिकों ने अपने अन्य परीक्षणों के माध्यम से यह भी पाया कि जो लोग अपने दृष्टिकोण को बदलना जानते हैं, वे अपने को विशेष मानने में विश्वास नहीं रखते, बल्कि विशेष कार्य करने में विश्वास रखते हैं; क्योंकि यदि जीवन में संतुष्टि का एकमात्र आधार सफलता ही रहता है तो जीवन का समग्र विकास संभव नहीं हो पाता है।

इसके विपरीत मानसिकता वाले लोग एक छोटी-सी असफलता को भी स्वीकार नहीं कर पाते। कुछ वर्षों पहले, पेरिस के एक प्रसिद्ध शेफ बनर्डि लुसियु ने मात्र इस कारण आत्महत्या कर ली थी कि उनका रेस्टोरेंट विश्व में 17वें स्थान से 2 पायदान खिसककर 19वें स्थान पर चला गया था। स्पष्ट है कि एकसमान दृष्टिकोण वालों के लिए छोटी-सी असफलता को स्वीकारना संभव नहीं हो पाता है।

दृष्टिकोण को बदल सकने वाले लोग संघर्षों से घबराते नहीं हैं, वरन उनके अनुसार अपनी प्रतिभा को निखारने व बढ़ाने का प्रयत्न करते हैं। इसके विपरीत एकसमान दृष्टिकोण वाले व्यक्ति, चुनौतियों व समस्याओं के सामने आते ही उनसे घबराकर उस रास्ते से ही हट जाते हैं। इसके कारण उनके लिए उनके क्षेत्र के अतिरिक्त अन्य में विकास कर पाना संभव नहीं हो पाता।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

इस तरह मनोवैज्ञानिकों के अनुसार ग्रहणशीलता, परिणाम की चिंता किए बिना पुरुषार्थ करने की क्षमता, असफलताओं को स्वीकार कर जीवन में आगे बढ़ने का माददा व संघर्षों से जूझने का गुण—कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जो उनमें पाई जाती हैं, जो दृष्टिकोण बदलने की सामर्थ्य सुरक्षित रखते हैं।

आज मनोवैज्ञानिक जिस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं, उसे आज से दशकों पहले परमपूज्य गुरुदेव ने सरल व स्पष्ट शब्दों में समझा दिया था कि दृष्टिकोण

के परिवर्तन से संपूर्ण जहान को बदला जा सकता है और दृष्टिकोण का परिवर्तन किसी भी क्षण से संभव है।

जैसे ही हम आत्मसुधार की दिशा में कदम उठाते हैं, वैसे ही हमारी प्रगति व विकास के साथ ही पूर्ण विश्व के उत्थान का मार्ग प्रशस्त होने लगता है।

आज विज्ञान व अध्यात्म मिलकर इस सत्य की उद्घोषणा कर रहे हैं कि दृष्टिकोण को बदलने से ही व्यक्ति का निर्माण व युग का परिवर्तन संभव है। □

आजीवन सदस्य कृपया ध्यान दें

यह सूचना गत 9 मास से निरंतर जा रही है, इसका उत्तर नहीं मिल रहा है। समझा जा सकता है कि या तो पाठकों की इसमें रुचि नहीं है अथवा अन्य कोई कारण है। अतः आगामी मास से पुराने आजीवन सदस्यों की अखण्ड ज्योति भेजना बंद किया जा रहा है।

आपने जब आजीवन सदस्यता स्वीकार की थी, तब से अब तक महँगाई इतनी अधिक बढ़ चुकी है कि पत्रिका की आजीवन सदस्यता का निर्वहन कर पाना कठिन हो रहा है। अब पूर्व की सुरक्षानिधि में आजीवन सदस्यता बनाए रखना संभव नहीं जान पड़ता। जो सदस्य रुपये 150 (सन् 1982) में बने थे, उन्हें अभी तक पत्रिका भेजी जा रही है; जबकि वार्षिक चंदा रुपये 15 (सन् 1982) से बढ़कर रुपये 300 हो गया है—भविष्य में और बढ़ता रहेगा। ऐसी स्थिति में आजीवन सदस्यता को पुरानी शर्तों पर जारी नहीं रखा जा सकेगा।

अब नई व्यवस्था के अनुसार आजीवन सदस्यता 20 वर्ष तक सीमित रहेगी। उसका अब चंदा रुपये 6000/- होगा। हम सबकी यही अपेक्षा है कि जो श्रद्धा-स्नेह का संबंध लंबे समय से बना हुआ है, वह और भी प्रगाढ़ होगा। अखण्ड ज्योति का आलोक आपको एवं अन्य परिजनों को आलोकित करता रहेगा।

इसके लिए हम आपके समक्ष निम्न विकल्प प्रस्तुत कर रहे हैं—

(1) आपका आजीवन शुल्क जो भी जमा है, उसे काटकर शेष रुपया और भेज दें, ताकि आपकी आजीवन सदस्यता (20 वर्षीय) बनी रहे। राशि बैंक ड्राफ्ट/चैक/RTGS/NEFT से भेजी जा सकती है। राशि भेजने के लिए बैंकों का विवरण पत्रिका में पृष्ठ सं. 51 पर दिया गया है।

(2) आपकी आजीवन सदस्यता समाप्त कर दी जाए एवं जमा सुरक्षानिधि वार्षिक चंदा में ट्रांसफर कर दी जाए। उस राशि से वार्षिक चंदा रुपये 300/- के हिसाब से जब तक का चंदा बने अखण्ड ज्योति भेज दी जाए।

(3) यदि किन्हीं कारणोंवश ऐसा संभव न हो पा रहा हो तो अपने बैंक खाते की जानकारी भेजने का अनुग्रह करें, जिससे आपको राशि वापस भेजी जा सके। विवरण मिलने पर आपके खाते में सीधे रुपया भेज दिया जाएगा।

पत्र व्यवहार में अपनी सदस्य संख्या, नाम, पता, फोन नंबर, ई-मेल का उल्लेख अवश्य करें।

आप सबको पत्र द्वारा सूचित किया जा चुका है, संभव है किसी कारणवश पत्र न मिला हो। अपनी सहमति का पत्र डाक/ई-मेल द्वारा भेजने का अनुग्रह करें।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है मनुष्य



जगत् कल्याण के लिए सदैव भ्रमण करते रहने वाले देवर्षि नारद की स्थिति कुछ दिनों से अत्यंत विचित्र हो गई थी। उनके मन की व्याकुलता बढ़ती ही जा रही थी। इस विराट सृष्टि और उससे जुड़े जड़-चेतन घटकों पर वे जितना विचार करते, उतना ही उन विचारों में उलझते जाते। उनकी इस व्याकुलता, असंतोष और उलझन का कारण क्या था ?

दरअसल देवर्षि नारद के मन में एक ऐसा प्रश्न उभर आया था, जिसने उन्हें उलझन में डाल दिया था, पर वह प्रश्न था क्या ? प्रश्न था—‘इस विराट सृष्टि में सबसे बड़ा व सबसे महान कौन है ?’ प्रश्न अत्यंत गंभीर, विचारणीय और महत्त्वपूर्ण था।

वे इस प्रश्न का उत्तर पाने को व्याकुल थे एवं चिंतन-मनन करने में लगे थे, पर इस प्रश्न का कोई उत्तर उन्हें मिल नहीं पा रहा था। अतः उस प्रश्न का उत्तर पाने को वे कोलाहल से दूर किसी एकांत स्थान की ओर तत्त्व-साधना के लिए चल पड़े।

एकांत में तत्त्व-साधना करते रहने के कारण उनका लोक-लोकांतरों में आवागमन भी रुक गया। समय-समय पर अन्य लोकों के समाचार, जो उनके माध्यम से मिलते रहते थे, वे मिलने बंद हो गए। यह सूचना भगवान विष्णु को भी मिली।

भगवान विष्णु ने अपने एक दूत को नारद जी को ढूँढ़ने तथा उन्हें साथ लेकर आने के लिए भेजा। दूत ने अपनी अंतर्दृष्टि से देखा कि देवर्षि नारद विष्णुलोक से दूर एक निर्जन एकांत क्षेत्र में तप-साधना कर रहे हैं।

वहाँ पहुँचकर उस दूत ने देवर्षि को भगवान विष्णु का संदेश सुनाया कि आपको प्रभु ने शीघ्र ही बुलाया है। देवर्षि नारद उस दूत के साथ तुरंत ही विष्णुलोक पहुँचे। उन्हें देखकर अंतर्धामी भगवान को यह समझते देर नहीं लगी कि देवर्षि नारद किसी समस्या से अति चिंतित हैं।

भगवान विष्णु ने पूछा—“नारद! आप अति चिंतित जान पड़ते हैं। इसका कारण क्या है ?” पूछने पर देवर्षि ने बताया—“देव! कुछ दिनों से मेरे मन में बारंबार यह प्रश्न उठ रहा है कि इस जगत् में सबसे महान कौन है ? सबसे श्रेष्ठ कौन है ? मेरी चिंता का यही कारण है। हे प्रभु! आप सर्वज्ञ हैं। आप इस प्रश्न का समाधान करके मेरी व्याकुलता दूर कीजिए।”

भगवान विष्णु बोले—“नारद! प्रत्यक्ष रूप से तो यह पृथ्वी ही सबसे बड़ी दिखाई देती है, पर वह भी समुद्र से घिरी हुई है। अतएव पृथ्वी भी बड़ी नहीं है। रही बात समुद्र की तो उसे भी अपनी तप शक्ति से एक बार अगस्त्य मुनि पी गए थे। अतः समुद्र भी बड़ा कैसे हो सकता है ? इससे तो अगस्त्य मुनि ही सबसे बड़े हुए।”

भगवान आगे बोले—“देखा जाता है कि अनंत आकाश में एक सीमित सूचिका सदृश भाग में वे भी मात्र एक जुगनू की तरह चमक रहे हैं। विराट आकाश के समक्ष तो उनका कुछ भी विस्तार नहीं है। इससे वे भी बड़े नहीं हो सकते। उनसे तो असंख्यों गुना अधिक बड़ा आकाश है, पर एक बार वामनावतार ने तो समस्त आकाश को केवल एक ही पग में नाप लिया था।

► ‘नारी सशक्तीकरण’ वर्ष ◄

अतः आकाश की महानता भी संदिग्ध सिद्ध होती है।”

भगवान ने अपना संबोधन जारी रखा व बोले—“आकाश की तुलना में तो वामनावतार की सामर्थ्य अधिक जान पड़ती है, परंतु उन वामनावतार का अंगुष्ठमात्र स्वरूप हर मनुष्य के अंतःकरण में आत्मा के रूप में विद्यमान है और जिसमें स्वयं ईश्वरीय सत्ता बीज रूप में मौजूद है, उससे बढ़कर महान और कौन हो सकता है? उस बीज को विकसित करके आत्मा परमात्मा की स्थिति में पहुँच सकती है और मनुष्य के अंतःकरण में स्थित वह आत्मा उन सभी विशेषताओं से सुसंपन्न हो सकती है, जो परमसत्ता में है।”

देवर्षि की दृष्टि को आलोकित करते भगवान बोले—“छोटे से बीज में वृक्ष दिखाई तो नहीं

पड़ता, पर उस छोटे-से बीज में ही विराट वृक्ष सूक्ष्मरूप में उपस्थित रहता है और जब उस बीज को अनुकूल जलवायु प्राप्त होती है, तब उस बीज से ही अंकुरण के रूप में उस विराट वृक्ष के प्रकटीकरण की प्रक्रिया प्रारंभ हो जाती है, ठीक वैसे ही; जैसे ज्ञान, कर्म, भक्ति, साधना, स्वाध्याय, जप-तप आदि प्रक्रियाओं से गुजरने पर आत्मा में परमात्मा का प्रकटीकरण होता है। अस्तु हे नारद! मनुष्य इस सृष्टि में सबसे महान है।”

देवर्षि नारद को इस प्रकार अपने प्रश्न का समाधान मिला। उन्हें यथार्थता का बोध हुआ और उनकी व्यग्रता व व्याकुलता समाप्त हुई। भगवान के द्वारा नारद को जो ज्ञान उपलब्ध हुआ उसे भूलोकवासियों को हृदयंगम कराने के लिए वे तुरंत भूलोक की ओर चल पड़े। □

भिक्षु विनायक को प्रवचन करने की आदत पड़ गई। विद्वान थे सो विषय की जानकारी भी थी, अतः सड़क पर खड़े होकर लोगों को पकड़ते और उन्हें भाँति-भाँति के विषयों पर प्रवचन दिया करते। लोग त्रस्त होने लगे। कुछ ने तथागत से उनके व्यवहार की शिकायत की।

तथागत ने विनायक को मिलने बुलाया और उनसे पूछा—“भंते! यदि कोई मार्ग पर खड़ा होकर गायें गिनने लगे तो क्या वो उनका स्वामी बन जाएगा?” विनायक ने उत्तर दिया—“नहीं भगवन्!” तथागत आगे बोले—“पुत्र! प्रवचन सदा ही दूसरे के वचन हैं। एकत्रित की हुई जानकारीयाँ सूचना मात्र होती हैं, ज्ञान नहीं। अनुभव से निकला हुआ ज्ञान स्वयं को प्रकाशित करता है और जगत् को आलोकित। तुम पहले स्वयं को प्रकाशित करो, फिर ज्ञान स्वयं ही तुम्हारे माध्यम से प्रवाहित होने लगेगा।”

► ‘नारी सशक्तीकरण’ वर्ष ◀

परम शांति का मार्ग



मन की शांति का सबसे बड़ा उपाय मन की त्यागमूलक वृत्ति है, उसे उजागर किया जाना चाहिए। सबसे पहले मन को त्याग भाव में रखा जाए, उसे बाह्यजगत् से पड़ने वाली अड़चन से बचाकर अंतर्हृदय में केंद्रित रखा जाए। मन की अभिलाषा होती है बाहर घूमने जाऊँ—ऐसे में आवश्यक है कि उसे बाँधकर जिम्मेदारीपूर्वक अपने वश में किया जाए।

इसके बाद मन को दिशाहीन न होने देने के लिए, उसे सदा सार्थक एवं उपयोगी कार्य में लगाया जाए। इस प्रकार हम देखेंगे कि किस प्रकार हमारा मन निरंतर उद्वेगरहित हो, शांति एवं समुन्नति की दिशा में बढ़ चलता है।

मन है एक विशाल सरोवर, जिसका स्रोत हैं—मनुष्य की वृत्तियाँ। यदि वृत्तियों को रोककर उन्हें किसी आदर्श की दिशा में लगाया जाए, उनसे लाभ लेकर मन की गति एवं स्वरूप को निर्धारित किया जाए तो देखते-ही-देखते संकल्पपूर्वक मन को नियंत्रित करना एवं आत्मिक शांति को प्राप्त करना सहज हो जाता है। मन अशांत है तो इसका एक ही कारण है—मन का अज्ञान और उसका किसी प्रकार अपनी शक्ति के स्रोत से वंचित हो जाना।

मन की अंतरंग वृत्ति को जिस दिन मनुष्य समझना सीख जाएगा, उस दिन उसे अपने प्रत्येक प्रयोजन में सफलता प्राप्त होगी एवं वह निस्पृह हुआ अपने केंद्रीय लक्ष्य की दिशा में बढ़ चलेगा। प्रकाश का सूर्य ही उसकी शांति, सद्गति एवं

प्रेरणा का कारण है और यह प्रकाश और कुछ नहीं, मन का आत्मा से सम्मिलन है।

इसके उपरांत उसके सत्य से विमुख होने का कोई कारण नहीं रह जाता एवं वह विचारदर्शी बन, समग्रता में सत्य का बोध प्राप्त करता है तथा उसे किसी भी प्रकार की कठिनाई अपनी भीतरी दिव्यता को उजागर करने में नहीं होती तथा वह निस्पृह एकाकी हो, अपने को हर दृष्टि से उन्नत एवं समर्थ बनाता जाता है।

मन की तरंग को अपने वश में कर लेना ही शांति का उपाय है तथा जिस मन में अपने निग्रह की क्षमता आ गई है, वह फिर दुःख-द्वंद्वों में पड़कर अपनी क्षमताओं से विमुख नहीं होता है। मन पर पड़ने वाले कुप्रभावों को जिस दिन हम सद्विचाररूपी अग्नि से समाप्त करना सीख जाएँगे तथा अंतरात्मा की गहन प्रेरणा से क्रियाशील होंगे, तभी हमें वास्तविकता का पथ एवं सत्य-विषय की शोध का पथ दिखाई पड़ेगा।

जब मन किसी विषयवस्तु से जा टकराता है, तब वह अपने मूल प्रयोजन को ही भुला बैठता है एवं उसे अंतर्मन की गहराई से आ रही सत्य की आवाज सुनाई नहीं पड़ती है।

मन की यही दुर्बलता उसे किसी भी सत्संकल्प में न लगा पाने का कारण है। जब मन अपने सभी दोषों को त्याग देता है, तब उसे वास्तव में सत्य के अनुसंधान का अवसर प्राप्त होता है एवं तब वह शांति के केंद्र आत्मा की अमिट प्यास की ओर झुक पड़ता है।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

यही परम शांति का वह मार्ग है, जिस पर हम सभी को चलना चाहिए। शांति पानी हो तो उसे दोष-दुर्गुणों के परित्याग एवं अंतस् के विकास पथ में देखा जाए, तभी वास्तव में व्यक्तित्व उस दिव्य शांति के अनुरूप गठित हो पाएगा, जिसने विश्व को सदा से प्रफुल्लित एवं आलोकित किया है।

शांति का उपाय अपने अंतर्मन के परिशोधन में है। अपने हृदय की प्यास को बुझाकर मन का एकत्वदर्शी एवं समतापरायण होना—यही मन की दिव्यता, संपूर्णता एवं स्वरूप से तदाकार होने का अनूठा विज्ञान है, जिसे प्रत्येक प्रकाशदर्शी को, हर जाग्रत हृदय को प्रत्येक परिस्थिति में स्वीकारना चाहिए तथा उसे उजागर कर शांति, सुमंगल एवं श्रेष्ठता के पथ पर बढ़ना चाहिए।

यदि हमारे हृदय में आत्मिक शांति का वास है तो उसे किसी भी परिस्थिति में, किन्हीं भी कठिनाइयों के मध्य डिगाया नहीं जा सकेगा तथा वह परिपूर्णता में अपने विशुद्ध स्वरूप को प्राप्त करने में सफल हो सकेगा।

आत्मोपलब्धि एवं आत्मशांति एक ही सत्य की प्राप्ति के दो मार्ग हैं तथा उन्हें विकसित करने एवं प्रयोग में लाने के लिए हमें बुरे विचारों से परित्यक्त होना पड़ेगा, ताकि हमारा जीवन सुख, सौंदर्य एवं शांति का पर्याय बन सके।

सुस्पष्ट विचार एवं सुदृढ़ कार्यप्रणाली की दिशा में बढ़ने में कोई कठिनाई न हो तथा हमारा अंतर्मन प्रत्येक कार्य सूझ-बूझ एवं नीति के साथ कर सके यही शांति, दिव्यता एवं अनुग्रह का वह मार्ग है, जिस पर चलकर महामानव गढ़े जा सकते हैं एवं उनसे विश्व की समस्याओं का निपटारा संभव हो पाता है।

शांति सदोष नहीं होती और अशांति का हमेशा कोई कारण होता है। यदि हमारे हृदय में पूर्ण स्पष्टता हो तो हम शांति को ही चुनेंगे एवं तब समस्त बाह्यजगत् हमें अपनी ही प्रकाश-किरणों का कार्य विस्तार एवं एक ही परमात्मा की अनुपम अभिव्यक्ति दिखाई देगा तथा संपूर्ण अस्तित्व एक ही दिव्य नाद से आलोकित होता दिखेगा। □

अपने समय की प्रख्यात लेखिका नारी स्वातंत्र्य की हिमायती मेरी स्टो किशोरावस्था में बहुत सुंदर लगती थी। उसकी चर्चा और प्रशंसा भी बहुत होती थी। इस पर लड़की को गर्व होने लगा और इतराकर चलने लगी।

बात उसके पिता को मालूम हुई तो उन्होंने बेटी को बुलाकर प्यार से कहा—“बच्ची, किशोरावस्था का सौंदर्य प्रकृति की देन है। इस अनुदान पर उसी की प्रशंसा होनी चाहिए। तुम्हें गर्व करना हो तो 60 वर्ष की उम्र में शीशा देखकर करना कि तुम उस प्रकृति की देन को लंबे समय तक अक्षुण्ण रखकर अपनी समझदारी का परिचय दे सकीं या नहीं।”

इस शिक्षा का ही परिणाम था कि अपने अहंकार को गलाकर मेरी स्टो एक समाज-सेविका के रूप में विकसित हो सकीं।

► ‘नारी सशक्तीकरण’ वर्ष ◀

संवेदना का साकार स्वरूप वंदनीया माताजी



अखण्ड ज्योति परिवार का प्रस्फुटन, पोषण, संरक्षण और विकास जिनकी आँचल की छाँह में हुआ है, उनका नाम है—परमवंदनीया माता भगवती देवी शर्मा जी। अखिल विश्व गायत्री परिवार की संस्थापिका, परमवंदनीया माताजी का जीवन चरित्र-संवेदना का साकार विग्रह है।

स्नेहसलिला, शक्तिस्वरूपा, सजलश्रद्धारूपा, वात्सल्यमयी माँ के कितने ही नामों से हम सब परिचित हैं, लेकिन उनके बच्चों में सर्वाधिक प्रिय संबोधन तो परमवंदनीया माताजी ही रहा है। स्वयं गुरुदेव भी उन्हें माताजी नाम से ही संबोधित करते थे। मातृत्व का सच्चा आदर्श उनके जीवन में सर्वदा प्रतिष्ठित रहा है। ममत्व का विस्तार ही उनकी जीवनयात्रा का परिचायक है तथा इष्ट के प्रति श्रद्धा और समर्पण उनके जीवन का पर्याय है।

अखंड दीप के प्रज्वलन वाले वर्ष 1926 में ही माताजी का जन्म भी हुआ है, यह दैवी विधान के अनुसार ही कहा जा सकता है; क्योंकि पूज्यवर की आध्यात्मिक यात्रा का प्रथम कदम अखंड दीप से ही प्रारंभ हुआ है। उनकी इस यात्रा में जीवनसंगिनी के रूप में माताजी की महत्वपूर्ण भूमिका सुनिश्चित थी, अतः उन्होंने भी धराधाम पर आने के लिए उपयुक्त काल को अखंड दीप की यात्रा के साथ संयुक्त कर लिया।

गृहस्थ जीवन में प्रवेश के साथ ही माताजी की भागीदारी गुरुदेव के महान उद्देश्यों के साथ जुड़ गई। कुछ समय आँवलखेड़ा में रहने के बाद मथुरा और फिर उत्तरार्द्ध के 24 वर्ष हरिद्वार के

सप्तसरोवर क्षेत्र में स्थित सिद्धतीर्थ शांतिकुंज में उनका निवास रहा।

उनके लौकिक जीवन की यात्रा का प्रारंभिक समय लगभग 45 वर्ष ब्रजभूमि और तदुपरांत सप्त ऋषियों की तपःस्थली में व्यतीत हुआ। हर पल समर्पण-सेवा-साधना में, जनहित के लिए तिल-तिलकर गलने में तथा स्नेह व ममत्व को अहर्निश लुटाते रहने में उनका जीवन नियोजित हुआ।

यही उनके दृश्य जीवन की परिभाषा है। जीवन के प्रत्येक क्षण को गुरुदेव के मार्गदर्शन में पात्रता को अर्जित करने और व्यक्तित्व को उनके आदर्शों में ढाल सकने वाली अनुशासित जीवन-साधना में लगाने की अद्वितीय मिसाल है—परमवंदनीया माताजी की जीवनयात्रा।

त्याग, समर्पण और सेवा-साधना की कसौटी पर ही माताजी के व्यक्तित्व में सच्चा शिष्यत्व साकार हुआ और उनका जीवन ऋषियुगम के रूप में गुरुदेव के साथ एकाकार हो पाया। जनसामान्य भले ही उन्हें पूज्यवर की जीवनसंगिनी समझते रहे, परंतु स्वयं माताजी ने अपने को सदैव एक परमसौभाग्यशाली शिष्या ही माना और उसी कसौटी पर जीवन जीते हुए गुरुदेव की चेतना में ही समाहित हो गईं।

गुरुदेव के लिए उनके शब्द थे—‘मैंने उन्हें पति के रूप में नहीं, देवता के रूप में ही देखा है। वे हैं ही इसी योग्य। मेरे लिए गुरु और भगवान सब कुछ गुरुदेव ही हैं। उनकी आज्ञानुवर्तिनी और इच्छा-अनुगामिनी बनने के अतिरिक्त और कभी कुछ सोचा भी नहीं है।’ इन भावों की अभिव्यक्ति माताजी

► ‘नारी सशक्तीकरण’ वर्ष ◄

ने अखण्ड ज्योति के 24वें वर्ष के जुलाई अंक में 'अपनों से अपनी बात' में की है।

वंदनीया माताजी की संपूर्ण निष्ठा अपने इष्ट के प्रति रही व कर्तृत्व का हरेक क्षण इष्ट के संकल्प को साकार बनाने हेतु समर्पित रहा। वैसे तो पूज्य गुरुदेव ने समय-समय पर मिशन की अनेक विशिष्ट जिम्मेदारियाँ माताजी के कंधों पर डाली थीं और वे उनमें शतप्रतिशत खरी भी सिद्ध हुईं, परंतु जो सबसे बड़ी जिम्मेदारी उन्हें मिली थी, वह थी मिशन की बागडोर उनके हाथ में होना।

जब मथुरा से शांतिकुंज आकर रहने का अवसर आया तब माताजी की सहज सहमति और संग चलकर तप-साधना में समर्पित होने की इच्छा को देखते हुए ही पूज्य गुरुदेव ने उन्हें अपने महाअभियान में सहभागिनी बनाना निश्चित कर लिया था।

मथुरा प्रवास की अवधि में अखण्ड ज्योति के संपादन से लेकर अन्य कई महत्वपूर्ण मिशन के कार्यों में, पूज्य गुरुदेव ने वंदनीया माताजी का सहयोग लिया था, परंतु जून 1971 की पूज्यवर की हिमालय यात्रा के साथ ही माताजी के ऊपर संपूर्ण रूप से संगठन को चलाने की जिम्मेदारी आ गई, जो उनके लिए किसी अग्नि-परीक्षा से कम नहीं थी।

यों तो अखण्ड ज्योति परिवार को संगठित-विस्तृत करने तथा एक अलौकिक आत्मीयता की डोर से बाँधे रखने का कार्य माताजी प्रारंभ से ही करती आ रही थीं, लेकिन गुरुदेव के हिमालय जाने तथा वापस लौट के न आने वाली अनिश्चितता ने माताजी के समक्ष जीवन की सबसे कठिन चुनौती प्रस्तुत की थी; क्योंकि अब माताजी को ही समस्त जिम्मेदारी सँभालनी थी। वे लाखों-करोड़ों की माँ होने के साथ-साथ मिशन की संचालिका और युगनेतृत्व के लिए महाशक्ति की भूमिका में आ गई

थीं। यह माताजी के साथ-साथ संपूर्ण मिशन और गायत्री परिवार की यात्रा का सर्वथा एक नया मोड़ एवं एक नूतन अध्याय था।

परमवंदनीया माताजी यह बखूबी जानती थीं कि गायत्री परिवार का संगठन जिस तरह से देश-विदेश में विस्तृत हो विशाल वटवृक्ष की भाँति आकार ले रहा है, उनके प्राणों के सिंचन की डोर अखण्ड ज्योति ही है। यह गुरुदेव की ज्ञानप्रभा से प्रदीप्त क्रांतिकारी विचारों की चिनगारियाँ साथ लेकर जाती है और जहाँ पहुँचती है, वहीं से परिवर्तन की ज्वालाएँ उठ खड़ी होती हैं।

इसके ज्ञान-प्रकाश से लाखों-करोड़ों की संख्या में दीपमालिकाएँ जल उठी हैं, जो ज्ञानपुंज के दीपक बनकर चारों दिशाओं में उजियारा फैलाने के लिए आतुर हैं। अखण्ड ज्योति की इस महत्वपूर्ण भूमिका को अतीत की भाँति आगे भी गरिमापूर्ण और जीवंत बनाए रखने का उत्तरदायित्व भी उन्हें ही सँभालना था।

वंदनीया माताजी ने ईश्वरीय उपदेश मानकर लेखन-संपादन के मोर्चे पर भी नेतृत्व का निर्वहन करते हुए संपादक की भूमिका में आश्वस्त किया कि 'अखण्ड ज्योति के माध्यम से जो प्रेरणाशक्ति अब तक प्रवाहित होती रही है, वह यथावत् जारी रहेगी। पूज्य गुरुदेव के द्वारा जो उच्चकोटि के विचार अब तक दिए जाते रहे हैं, उससे एक दर्जे और भी ऊँचे विचार पाठकों को मिलेंगे।'।

इस आश्वासन के पीछे उन्हें अपने इष्ट और उनके महासंकल्प की शक्ति पर पूरा भरोसा था। इसी भरोसे को आधार बनाकर उन्होंने गुरुदेव की इस पाती के द्वारा शांतिकुंज व तपोभूमि मथुरा से अनेकों साधनात्मक, रचनात्मक तथा जीवन-विद्या के मर्म को सिखाने वाले प्रशिक्षणात्मक शिविरों का कुशलतापूर्वक संचालन किया।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

इसके साथ अध्यात्म साधना एवं वैज्ञानिक अध्यात्मवाद से संबंधित शिक्षण-प्रशिक्षण कार्यक्रमों को भी तीव्रता प्रदान की। वंदनीया माताजी के इन प्रयासों का परिणाम यह हुआ कि अखण्ड ज्योति परिवार-के भावनाशील पाठकों के साथ समाज के शिक्षित और प्रबुद्ध समझे जाने वाले वर्ग के लोगों की संख्या भी मिशन से लाखों की संख्या में जुड़ती चली गई।

पूज्य गुरुदेव की भाँति ही माताजी के नेतृत्व में साधना-तपश्चर्या का कठिन पुरुषार्थ मिशन के हर अगले बढ़ते कदमों के साथ संयुक्त रहा। देवकन्याओं को लेकर शांतिकुंज में अखंड दीप के समक्ष चौबीस-चौबीस करोड़ गायत्री जप के महापुरश्चरण, व्यक्तिगत तप-साधनाओं के साथ-साथ सामूहिक साधना-अनुष्ठानों का स्थान-स्थान पर आयोजन, विशेष साधना वर्षों की उद्घोषणा एवं उनके क्रियाकलापों के संचालन, छोटे-बड़े गायत्री महायज्ञों के अंतरराष्ट्रीय स्तरों पर आयोजन जैसे अनेकों प्रयोगात्मक स्वरूप के गहन आध्यात्मिक पुरुषार्थों को वंदनीया माताजी द्वारा संपन्न कराया गया। जनसमाज, राष्ट्र एवं समूचे विश्व में अध्यात्म के साथ-साथ सांस्कृतिक चेतना के मंथन के लिए अश्वमेध जैसे विराट महायज्ञों का सूत्रपात कर देश-विदेश में इनकी सुनियोजित शृंखला चलाई गई।

मिशन की सैकड़ों गतिविधियों, महाआयोजनों का सूत्र-संचालन बड़ी कुशलता से करते हुए साथ में नारी जागरण का भी एक बड़ा आंदोलन उन्होंने खड़ा कर दिया। तपःपूत कन्याओं द्वारा नारी जागरण सत्रों का संचालन कर पूरे भारतवर्ष में देवकन्याओं को भेजकर जनजागरण के लिए संपन्न होने वाले आयोजनों को नेतृत्व प्रदान किया। युगतीर्थ में भी 3-3 माह के नारी जागरण के विशेष सत्रों का संचालन किया जाने लगा।

यह सब ऋषिपरंपराओं की पुनर्स्थापना प्रक्रिया के अंतर्गत किया जाने वाला पुरुषार्थ था। सन् 1984 में पूज्य गुरुदेव की सूक्ष्मीकरण साधना की समय अवधि में माताजी ने पूरे मिशन को एक महान परिवर्तनकारी साधना आंदोलन से जोड़ दिया था।

युगसंधि महापुरश्चरण साधना, राष्ट्रीय एकता सम्मेलनों का आयोजन, 108 कुंडीय महायज्ञों की शृंखला और घर-घर में दीपयज्ञों के प्रचलन की दिव्य परंपरा का बीजारोपण—इन सभी कार्यक्रमों की केंद्रीभूत सत्ता—शक्ति-संवाहिका स्वयं वंदनीया माताजी ही थीं।

पूज्यवर के महाप्रयाण अर्थात् गायत्री जयंती सन् 1990 के बाद तो वंदनीया माताजी की कर्तृत्वशीलता अत्यधिक तीव्र हो उठी थी। जिस गति से अब तक मिशन की समस्त गतिविधियाँ संचालित की जा रही थीं, उन सभी को कई गुना तीव्र और विस्तृत स्वरूप में किया जाने लगा। शक्ति-सामर्थ्य और प्रेरणा की दृष्टि से कोई कम न समझ ले, इस दृष्टि से विराट स्तर के श्रद्धांजलि समारोह को कुंभनगरी हरिद्वार में आयोजित कर गायत्री परिवाररूपी संगठन में उन्होंने नई चेतना-ऊर्जा भर दी और पूज्य गुरुदेव की संकल्पना को साकार बनाने में प्राणपण से जुट जाने का आह्वान किया।

शक्ति-साधना समारोह, संस्कार महोत्सव, रजत वंदन समारोह और देव संस्कृति दिग्विजय अभियान—ये सब माताजी द्वारा आह्वान प्रक्रिया के आयाम थे। आह्वान इस बात का कि पूज्य गुरुदेव के विचारों से स्वयं जुड़ें और दूसरों को जोड़ें। उनका भाव था कि समूची विश्वमानवता के कल्याण और उज्ज्वल भविष्य की स्पष्ट छवि को गुरुजी के चिंतन में हर कोई देख सके और उनसे जुड़ सके। हुआ भी कुछ ऐसा ही।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

देखते-ही-देखते अखण्ड ज्योति परिवार, प्रज्ञा परिवार, गायत्री परिवार, लाखों की संख्या से बहुगुणित हो करोड़ों-करोड़ों समर्पित स्वयंसेवी साधकों वाले विश्व के अद्वितीय विशालतम संगठन के रूप में प्रकट हुआ। अखिल विश्व गायत्री परिवार को इस सदी का अद्वितीय और सर्वाधिक विराट संगठन माना जाना चाहिए; क्योंकि मानव कल्याण से जुड़े महान उद्देश्यों को लेकर कर्मठ, सेवाधर्मी कार्यकर्ताओं का इतना बड़ा जनसमुदाय विश्व में अन्यत्र कहीं नहीं देखा जा सकता।

परमपूज्य गुरुदेव ने अपने महान लक्ष्य के लिए इस संगठन की नींव रखी और वंदनीया माताजी ने अपने मातृत्व की स्नेहिल छाया में इसे पल्लवित-पुष्पित और विकसित बनाया है। पूज्य गुरुदेव की योजनाओं के प्रति स्वयं को पूर्णतया समर्पित कर देने वाली मातृशक्ति जगदंबा माँ

भगवती का महाप्रयाण दिवस हम सभी उनकी करोड़ों संतानों के लिए स्वयं को उनकी चेतना में विलय कर अपने संकल्प-समर्पण को और अधिक प्रगाढ़ करने का सौभाग्य लेकर आया है।

इस विराट परिवार के साथ जुड़े हरेक सदस्य का यह परम सौभाग्य है कि उन्हें अभिभावकों से भी कहीं ज्यादा प्यार करने वाली माँ मिली है और उस माँ का संरक्षण-स्नेह-आशीर्वाद-अहर्निश सबके साथ बना हुआ है और आगे भी सदैव रहेगा।

यहाँ अपनी संतानों के लिए माताजी के आश्वासन का स्मरण स्वतः आ जाता है। उनके शब्द हैं—‘जब तक अपना एक भी बालक दुःखी है, उसे दिलासा देने, उसकी माँ उसके आस-पास ही कहीं विद्यमान है। उसका आँचल इतना बड़ा है कि सारी जगती के दुःखी जनों को वह अपनी संरक्षण छाया में रख सकती है।’ □

वर्षों तपस्या करने के उपरांत एक व्यक्ति गुह्य विधाओं का विशेषज्ञ बन गया। दुर्भाग्यवश ज्ञान के साथ उसके अंदर अहंकार भी उतना बढ़ गया। वह अपने को सर्वेसर्वा समझता और उससे ज्ञान प्राप्त करने को लालायित व्यक्तियों को अपमानित करके भेजता।

एक दिन उसकी दृष्टि आकाश मार्ग से गुजरते ब्रह्मराक्षस पर पड़ी। मंत्रों के प्रभाव से उसने उसे खींचकर अपने पास बुला लिया और ब्रह्मराक्षस की योनि मिलने के कारण पर प्रश्न किया। उत्तर मिला कि मनुष्ययोनि में वह वेदों का प्रकांड विद्वान था, पर अभिमानवश उसने अपना ज्ञान किसी को प्रदान नहीं किया और जीवन भर लोगों के साथ दुर्व्यवहार किया।

यह सुन उसकी आँखें खुल गईं और उसने जीवन का शेष समय सन्मार्ग पर चलने का निश्चय किया।

► ‘नारी सशक्तीकरण’ वर्ष ◀

हो-परिवार जहाँ नंदनवन वह भू-स्वर्ग समान है



भारत की परिवार-व्यवस्था रत्नों की खान के रूप में जानी जाती रही है। प्रस्तुत गीत की पंक्तियाँ हमें भारत की उसी परिवार-व्यवस्था की एक झलक-झाँकी दिखाती हैं—

इतने रत्न दिए हैं कैसे,
जिससे देश महान है।
भारत की परिवार-व्यवस्था ही,
रत्नों की खान है॥
इसी खान के रत्नों के,
इतिहास चाव से पढ़े गए।
अध्यायों की अँगूठियों में,
यही नगीने जड़े गए॥
सजे हुए हैं यही रत्न तो,
जन मंगल के थाल में।
दमक रहे हैं ये हीरे ही,
मानवता के भाल में॥
इसी खान के रत्नों की तो,
सदा निराली शान है॥
इसी खान से ध्रुव निकले थे,
माँ ने उन्हें सँवारा था।
इस हीरे को नारद जी ने,
थोड़ा और निखारा था॥
तप की चमक लिए जा बैठा,
परमपिता की गोद में।
कितनों का बचपन कट जाता,
है आमोद-प्रमोद में॥
नभ में ध्रुव परिवार कीर्ति का,
शाश्वत अमर निशान है॥
जाना था वनवास राम को,

लक्ष्मण सीता साथ गए।
कीर्तिमान स्थापित सेवा,
स्नेह त्याग के किए गए॥
था सौहार्द सगे भाई से,
ज्यादा भ्राता-भ्राता में।
सौतेली माँ का मुख उज्ज्वल,
किया सुमित्रा माता ने॥
ऐसे ही परिवार चाहिए,
फिर से नवनिर्माण को।
जहाँ देव परिवार मिल सकें,
धरती के इनसान को॥
राम, भरत का स्नेह चाहिए,
घर-घर कलह मिटाने को।
दशरथ जैसा त्याग चाहिए,
राष्ट्र धर्म अपनाने को॥
हो परिवार जहाँ नंदनवन,
वह भू स्वर्ग समान है।

उपरोक्त गीत की पंक्तियों पर दृष्टिपात करने पर यह स्पष्ट होता है कि संस्कारों, सद्भावों व सद्गुणों से पूर्ण परिवार में ही नचिकेता, राम, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न, आचार्य शंकर, मैत्रेयी, मदालसा, लक्ष्मीबाई जैसे पुष्प खिले और वहीं संस्कारों, सद्भावों व सद्गुणों से हीन परिवार में पुष्प खिले नहीं, बल्कि मुरझा गए और परिवार में कलह, क्लेश से ऐसा कोहराम मचा कि उसमें रहने वाले लोग सदैव कुम्हलाए और दुःखी रहे।

परिवार ही वह प्रयोगशाला है, वह पाठशाला है जहाँ भावी पीढ़ियों की पौध पनपती, लहलहाती और मुस्कराती है। परिवाररूपी प्रयोगशाला में ही

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

व्यक्ति निर्माण का कार्य प्रारंभ होता है और यदि प्रारंभ ही ठीक नहीं हो तो श्रेष्ठ व्यक्ति का निर्माण हो पाना संभव नहीं हो पाता है। फलस्वरूप इसका खामियाजा व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र सबको भुगतना पड़ता है।

आज अधिकांश घर-परिवारों का वातावरण कलह-क्लेश से भरा-पूरा दिखाई पड़ता है। परिवार में किसी को किसी पर विश्वास नहीं है, आपस में प्रेम नहीं है। एकदूसरे के प्रति सहिष्णुता, स्नेह व सहकार की भावना नहीं है। परिवारों में खुशियों के फूल खिलने के बजाय मरघट-सा सन्नाटा पसरा हुआ है।

पिता-पुत्र, भाई-भाई, ताई-ताऊ, पति-पत्नी, माता-पिता आदि परिवार के सभी सदस्यों के बीच आपसी प्रेम, स्नेह, सहकार, श्रद्धा, सहिष्णुता, विश्वास का घोर अभाव है। बात-बात पर एक-दूसरे के ऊपर गालियों और अपशब्दों की बौछार तो सामान्य-सी बात है।

एकदूसरे को शक व संशय की दृष्टि से देखना, बात-बात पर धमकी और उलाहने देना, एकदूसरे के प्रति ईर्ष्या-द्वेष से भरे होना, झूठ बोलना, बात-बात पर झगड़े करना, बेईमानी करना, नशे करना, आलसी और प्रमादी होना, साफ-सफाई का ख्याल न रखना, मांसाहार करना, एकदूसरे को धोखा देने की ताक में रहना आदि आज के अधिकांश परिवारों का चलचित्र है और फिर ऐसे चलचित्र को देखते हुए भला व्यक्ति में, वहाँ पल रहे बच्चों में सद्भाव, संस्कार व सद्गुण भी कैसे पनप सकते हैं ?

ऐसे परिवारों से श्रेष्ठ व्यक्ति के निर्माण की कल्पना भी भला कैसे की जा सकती है? ऐसे परिवारों का वातावरण बड़ा ही डरावना और भयावह- सा लगता है। यहाँ अमावस का अँधेरा छाया हुआ दिखता है।

[illegible]

पल्लवित नहीं हो पाते हैं। सेब के पौधे शीत जलवायु में ही पुष्पित, पल्लवित और विकसित होते हैं, भूमध्यसागरीय जलवायु में अंगूर की लताएँ खूब फलती-फूलती हैं। नित्य स्नान से धान और पान के पौधे लहलहा उठते हैं, पर जल के अभाव में वे मुरझा जाते हैं।

परिवार में भी यदि सद्भावों, संस्कारों, सद्गुणों से भरा-पूरा वातावरण हो, दिव्य वातावरण हो, आध्यात्मिक वातावरण हो तो वहाँ श्रेष्ठ व्यक्तियों का निर्माण हो पाना सहज व सरल हो जाता है। अस्तु घर का वातावरण दिव्य होना ही चाहिए। अब प्रश्न यह उठता है कि घर का वातावरण दिव्य कैसे हो ?

पूज्य गुरुदेव ने बहुत सुंदर वचन कहा है कि हमें हमारे घर को तपोवन-सा बनाना होगा, नंदनवन-सा बनाना होगा। गृहस्थ का घर एक तपोवन-सा हो जिसमें उसे साधना, संयम और सहिष्णुता की साधना करनी चाहिए। घर में नित्य भगवद्उपासना होनी चाहिए। घर के सभी सदस्यों को सुबह सूर्योदय से पूर्व उठने का क्रम बनाना चाहिए। स्नान कर स्वच्छ वस्त्र धारण कर भगवद्उपासना, गायत्री मंत्र-जप, यज्ञ आदि करना चाहिए।

भगवद्उपासना के लिए घर के ईशान कोण वाले कमरे में भगवान की मूर्ति अथवा चित्र स्थापित कर नित्य पूजा-उपासना करनी चाहिए। प्रातःकाल आस-पास प्रकृति की गोद में, स्वच्छ हवा में टहलना चाहिए, कुछ योग, व्यायाम, प्राणायाम करना चाहिए। यह संपूर्ण स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है।

घर में नित्य सुबह-शाम भगवान की आरती होनी चाहिए, जिसमें परिवार के बड़े-बुजुर्ग, बच्चे सभी शामिल हों। महिलाओं को स्नान आदि से पवित्र होकर स्वच्छ वस्त्र धारण कर ही भोजन-प्रसाद बनाना चाहिए। भोजन से पहले भगवान को

भोग लगाना चाहिए, फिर उस भोजन-प्रसाद को ग्रहण करना चाहिए। घर में तुलसी का पौधा अवश्य लगाना चाहिए और पूजा-उपासना के पश्चात भगवान सूर्य को अर्घ्य प्रदान करना चाहिए। तुलसी में जल देना चाहिए।

यदि संभव हो तो प्रतिदिन संक्षिप्त गायत्री यज्ञ करना चाहिए। नहीं तो कम-से-कम सप्ताह में एक दिन पूर्ण विधि-विधान से विस्तारपूर्वक गायत्री यज्ञ करना चाहिए। घर में गीता, रामायण और स्वामी विवेकानंद, रमण महर्षि, श्रीअरविंद, युगऋषि परमपूज्य गुरुदेव आदि महापुरुषों द्वारा रचित साहित्य को रखना चाहिए तथा अखण्ड ज्योति, युग निर्माण योजना जैसी श्रेष्ठ पत्रिकाओं का नित्य स्वाध्याय करना चाहिए।

माता-पिता को गीता या अन्य ग्रंथों को बोलकर भी पढ़ना चाहिए और अपने पास बच्चों को सुनाना भी चाहिए, जिससे उनमें श्रेष्ठ संस्कारों का समावेश हो। घर में स्वच्छता और पवित्रता का पूरा ध्यान रखना चाहिए। घर में सुसंस्कारी वातावरण के लिए जरूरी है कि हम घर के आस-पास भी स्वच्छता का ख्याल रखें। घर के आस-पास आँवला, नीम, तुलसी आदि पौधे लगाएँ। सुगंधित पुष्प लगाएँ, जिससे वातावरण सुगंधित हो। घर में बड़े एकदूसरे का सम्मान करें। इसे देखकर बच्चे भी एकदूसरे का सम्मान करना सीखते हैं। घर के छोटे; बड़ों को अपमानित न करें।

स्वयं के जीवन में शुचिता, पवित्रता, विनम्रता, प्रेम आदि भावों को भरें। घर में बुजुर्गों का सदैव सम्मान-सत्कार और सेवा करें। ये देखकर बच्चे भी सम्मान करना, सेवा करना सीखते हैं। हम जो भी करते हैं बच्चे उसी से सीखते हैं। हम घर में बुरा व्यवहार करते हैं तो बच्चे उसे भी सीखते हैं और

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

अच्छा व्यवहार करते हैं तो उससे भी सीखते हैं।
बड़े एकदूसरे के प्रति ईमानदारी का व्यवहार करते हैं तो बच्चे उसी से ईमानदार होना भी सीखते हैं।

8-9 वर्ष से बड़े बच्चों को अपने काम स्वयं करना सिखाएँ, जैसे कि अपने कमरे की साफ-सफाई करना, अपने जूते बरतन धोना, अपने वस्त्र धोना, अपनी पुस्तकें एवं अन्य सामान को व्यवस्थित रखना आदि।

बच्चों में संस्कार और सद्गुणों के विकास के लिए उन्हें रामायण, महाभारत आदि महाग्रंथों से नैतिक-आध्यात्मिक कथाएँ सुनाएँ, बाल निर्माण कहानियाँ, शहीदों-वीरों, वैज्ञानिकों, संतों, भक्तों, महापुरुषों और जीवन के किसी भी क्षेत्र में शिखर पर पहुँचे लोगों की जीवनियाँ और आत्मकथाएँ उन्हें पढ़ने को दें।

छुट्टियों में परिवार के सदस्य बच्चों के साथ किसी तीर्थस्थान एवं प्राकृतिक सौंदर्य से भरे-पूरे स्थानों का भ्रमण करें। प्रकृति की निर्दोषता, निर्विकारिता हमारे मन को भी शीतल, शांत और आह्लादित करती है, निर्मल करती है। जीवंत, जाग्रत और आध्यात्मिक ऊर्जा से ओत-प्रोत तीर्थ स्थानों का सान्निध्य हमें ऊर्जा से भर देता है।

घर में एक धर्मघट रखें, जिसमें नित्य कम-से-कम एक रुपया डालें, फिर महीने, वर्ष पूरे होने पर उसे किसी संत को, किसी जरूरतमंद गरीब व्यक्ति को, किसी आश्रम आदि को दान कर दें। इसे देख कर बच्चों में भी दूसरों को देने की प्रवृत्ति पनपती है।

ऐसे बच्चे ही आगे चलकर परिवार, समाज व राष्ट्र के लिए अपना अमूल्य योगदान दे पाते हैं। शाम में नित्य पारिवारिक गोष्ठी करें और घर की समस्याओं का समाधान सार्थक तरीके से खोजें। ऐसे क्रियाकलाप से घर का वातावरण निश्चित ही दिव्य बनता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि हम क्या नहीं करें? जरा-जरा-सी बात पर, छोटे-छोटे स्वार्थ के लिए झगड़ा, वाद-विवाद, कलह नहीं करें। ऐसा करने से बच्चे भी झगड़ालू, हठी बन जाते हैं। हम घर के किसी व्यक्ति के साथ झूठ नहीं बोलें, बेईमानी नहीं करें; क्योंकि यदि हम स्वयं ही झूठे और बेईमान हैं तो बच्चों को हम ईमानदार होने, विनम्र होने की सीख कैसे दे सकते हैं और यदि हम उन्हें ऐसी सीख देंगे भी तो उन पर उसका कोई असर नहीं होगा। क्यों? क्योंकि वाणी की अपेक्षा आचरण से दिया गया उपदेश अधिक प्रभावशाली होता है।

हम शराब, धूम्रपान, तंबाकू आदि का सेवन नहीं करें; क्योंकि बच्चे भी आगे चलकर यही करेंगे। नशे से जन-धन, स्वास्थ्य सबकी हानि होती है। नशा करने वाले व्यक्ति में संयम, विवेक, विनम्रता, नैतिकता आदि सद्गुण समाप्त हो जाते हैं। वे हिंसक और झगड़ालू हो जाते हैं, जिससे घर में कलह, क्लेश और कोहराम मचा रहता है। ऐसे वातावरण में बच्चों का सर्वांगीण विकास नहीं हो पाता। गलती करने पर बच्चों को प्यार से समझाएँ, सिखाएँ। यह भी देखते रहें कि बच्चों की संगति अच्छे बच्चों के साथ हो।

पढ़ाई के साथ-साथ बच्चों को खूब खेलने-कूदने दें। खेलने से ही बच्चे खिलते हैं, तरोताजा रहते हैं, स्वस्थ रहते हैं और उनमें एकाग्रता भी आती है, जिसका लाभ उन्हें पढ़ाई में मिलता है। बच्चों को आप इंजीनियर, डॉक्टर, आईएएस, वैज्ञानिक बनाने का सपना अवश्य दिखाएँ—इसमें कुछ भी बुरा नहीं है, पर उनके अंदर जो बनने की नैसर्गिक क्षमता है, प्रतिभा है, रुचि है, उसी के अनुसार उन्हें आगे बढ़ने और करने दें।

उन पर अपनी आशाओं और अपेक्षाओं का भारी-भरकम बोझ न डालें। इससे बच्चे तनाव,

चिंता के शिकार होते हैं और अपनी नैसर्गिक क्षमता, प्रतिभा भी खो देते हैं। बच्चों को श्रेष्ठ, संस्कारवान, चरित्रवान बनने, बनाने में सहयोग करें और उन्हें तदनु रूप वातावरण प्रदान करें। हम गंदे नहीं, साफ-स्वच्छ रहें, जिससे बच्चे भी ऐसा कर और सीख सकें।

घर में जंकफूड, फास्टफूड और मांसाहार की आदत नहीं पनपने दें। आहार ही हमारे व्यवहार को प्रभावित करता है। तामसिक आहार जहाँ हमारे मन को कलुषित करता है, हमें आलसी-प्रमादी, बीमार, अनैतिक और हिंसक बनाता है। वहीं सात्विक आहार हममें सतोगुण की वृद्धि करता है। हममें स्फूर्ति लाता है। हमें स्वस्थ बनाता है।

हमें यह सदैव ध्यान रखना चाहिए कि घर का वातावरण और अभिभावकों का आचरण बच्चों

के लिए प्रथम पुस्तक के समान होता है जिसे देखकर वे जीवन भर के लिए उसी प्रकार के बन जाते हैं। अँगरेजी के साहित्यकार विलियम वर्ड्सवर्थ ने कहा है—‘ए चाइल्ड इज दि फादर ऑफ मैन’ अर्थात् एक बच्चा आदमी का पिता होता है।

कहने का तात्पर्य यह है कि बच्चा बचपन में जैसी अच्छी-बुरी आदतें सीखता है, वह बड़ा होकर उन्हीं आदतों के कारण अच्छा या बुरा आदमी बनता है।

यदि हम इन सभी बातों का ख्याल रखें तो हमारे घर-परिवार को नंदनवन-सा सुगंधित, सुंदर बनते देर नहीं लगेगी और उस नंदनवन में, श्रेष्ठ, सुगंधित और सुंदर पुष्प अवश्य ही खिलेंगे, इसमें कोई संदेह नहीं और ऐसे दिव्य परिवार से ही सभ्य समाज व राष्ट्र का सपना साकार हो सकेगा। □

अध्यात्म रामायण में कथा आती है कि एक बार भगवान राम और लक्ष्मण एक सरोवर में स्नान के लिए उतरे। उतरते समय उन्होंने अपने-अपने धनुष बाहर तट पर गाड़ दिए। जब वे स्नान करके बाहर निकले तो लक्ष्मण ने देखा कि उनके धनुष की नोक पर रक्त लगा हुआ था।

उन्होंने भगवान राम से कहा—“भ्राता! लगता है कि अनजाने में कोई हिंसा हो गई। दोनों ने मिट्टी हटाकर देखा तो पता चला कि वहाँ एक मेंढ़क मरणासन्न पड़ा है।”

भगवान राम ने करुणावश कहा—“तुमने आवाज क्यों नहीं दी? हम लोग तुम्हें बचा लेते। जब साँप पकड़ता है तब तुम खूब आवाज लगाते हो, धनुष लगा तो क्यों नहीं बोले?” मेंढ़क बोला—“प्रभु! जब साँप पकड़ता है तो मैं ‘राम-राम’ चिल्लाता हूँ, पर आज देखा कि भगवान राम स्वयं धनुष लगा रहे हैं तो किसे पुकारता? बस, इसे अपना सौभाग्य मानकर चुपचाप लेटा रहा।” सच्चे भक्त जीवन के हर क्षण को भगवान का आशीर्वाद मानकर उसे स्वीकार करते हैं। सुख और दुःख, प्रभु की ही कृपा और कोप का परिणाम तो हैं।

अमूल्य निधि है संगीत



संगीत एक अनुपम एवं अमूल्य वरदान है। संगीत से पीड़ित हृदय को शांति एवं संतोष मिलता है। मनुष्य की सृजनात्मक एवं रचनात्मक शक्ति का विकास संगीत से होता है। इससे आत्मिक आनंद की नूतन सृष्टि होती है। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव हमारी भाव चेतना पर पड़ता है, जिससे रुग्ण तन स्वस्थ होने लगता है और विकारग्रस्त मन प्रसन्नता को प्राप्त करता है।

संगीत की अमूल्य निधि देकर परमात्मा ने हमारी पीड़ा का हरण किया है। हम सभी के जीवन में संगीत किसी-न-किसी रूप में समाहित है। प्रकृति के विभिन्न जीवों के स्वर में, बहती हुई नदियों के कल-कल में, बहने वाली हवाओं की लहरों में, संगीत की ध्वनि प्रतिबिंबित होती है और इसी कारण संगीत की स्वरलहरियाँ हमें अंदर तक झकझोरती एवं आनंदित करती हुई अपनी ओर आकर्षित करती हैं।

बहुत से लोग मनोरंजन के लिए संगीत सुनना पसंद करते हैं तो कुछ स्वयं को तनावमुक्त करने के लिए और कुछ लोग अपनी आध्यात्मिक प्रगति के लिए इसका सहारा लेते हैं। इसके अतिरिक्त संगीत का स्वास्थ्य पर प्रभाव भी बहुचर्चित है। भारतीय संगीत चिकित्सा का प्रधान वैशिष्ट्य राग है।

स्वरों की एक विशेष अवस्था राग कहलाती है। राग का मूल अर्थ 'रँगना' है अर्थात् रंग देने की प्रक्रिया। राग मानव चित्त को अपने रंग में रँग देता है, जिससे मानव मन प्रसन्न हो उठता है। स्वस्थ रहने के लिए जिस तरह उचित आहार की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार विहार के लिए

ऋतु और समय के अनुसार विभिन्न रागों को सुनना लाभप्रद है।

स्वर व लय तो विश्व के किसी भी संगीत में मिल सकता है, परंतु राग की अवधारणा भारतीय संगीत की अनूठी विशेषता है। यहाँ एक ज्यादा चुनौतीपूर्ण वैज्ञानिक सवाल यह है कि क्या संगीत आपकी संज्ञान क्षमता में बदलाव लाता है और मस्तिष्क में परिवर्तन करता है?

प्रश्न उठता है कि क्या संगीत को निष्क्रिय श्रोता के रूप में सुनना पर्याप्त है या सक्रिय होकर संगीत से जुड़ना आवश्यक है? समूह में या अकेले गाकर या कोई वाद्ययंत्र बजाकर संगीत का उपयोग किया जाए? सक्रिय रूप से जुड़ने का तात्पर्य है कि हम अपने मस्तिष्क पर दबाव डाल रहे हैं, उससे अभ्यास करवा रहे हैं। दूसरे शब्दों में संगीत का प्रभाव क्या होगा? गीत को सुनना ठीक है या स्वयं वाद्ययंत्रों को बजाना ठीक है?

एक दशक पूर्व प्रेस और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में मोजार्ट के पूर्व प्रभाव पर काफी चर्चा हुई थी। कुछ शोधकर्ताओं ने दावा किया था कि विद्यालयों में पढ़ने वाले जिन विद्यार्थियों ने महान यूरोपियन शास्त्रीय संगीतकार मोजार्ट को सुनते हुए परीक्षा दी थी, उनका प्रदर्शन अच्छा था। इनके मुकाबले विद्यार्थियों के एक अन्य समूह का प्रदर्शन उसी परीक्षा में उतना अच्छा नहीं रहा था, जिन्हें परीक्षा देते समय मोजार्ट नहीं सुनाया गया था।

इस शोध निष्कर्ष का व्यापक प्रभाव पड़ा और माता-पिता ने अपने बच्चों को वोल्फगांग अमेडियस मोजार्ट का संगीत सुनाना शुरू कर दिया

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

था। अभिभावक उम्मीद कर रहे थे कि इससे उनके बच्चों का प्रदर्शन भी सुधरेगा और शायद बौद्धिक क्षमता भी बढ़ेगी।

पेशेवर और लोकप्रिय, दोनों मीडिया में कथित मोजार्ट प्रभाव के बारे में कई सवाल उठाए गए थे। क्या इस प्रभाव को दोहराया जा सकता है? क्या संगीत केवल दिमाग को शांत करके उसे प्रस्तुत काम पर केंद्रित करने में मदद करता है और सिर्फ मोजार्ट ही क्यों, बीथोवन, बाख या बीटल्स क्यों नहीं?

क्या केवल पाश्चात्य संगीत का असर होता है; कर्नाटक, हिंदुस्तानी, जापानी संगीत या शांतिदायक मंत्रोच्चार का क्यों नहीं? क्या यह प्रभाव कुछ समय के लिए होता है या इसका प्रभाव लंबे समय तक रहता है? क्या संगीत शिशुओं को सुलाने के साथ-साथ होशियार भी बनाता है?

वैज्ञानिक और व्यावहारिक दोनों प्रकार के प्रयोगों के आधार पर इन सवालों के जवाब देने की कोशिश हुई। आम सहमति यह बनी है कि संगीत निर्विवाद रूप से श्रेष्ठ है, लेकिन मोजार्ट प्रभाव पर कोई निर्णय नहीं हुआ। यहाँ एक ज्यादा चुनौतीपूर्ण वैज्ञानिक सवाल यह है कि क्या संगीत हमारी संज्ञान क्षमता में बदलाव लाता है और मस्तिष्क में परिवर्तन करता है।

प्रत्येक क्षेत्र के परिणाम से स्पष्ट है कि संगीत हमारी शारीरिक एवं मानसिक क्षमता में वृद्धि करता है एवं हमें भावनात्मक रूप से स्थिर करता है। संगीत की अभिरुचि नितांत वैयक्तिक होती है, परंतु चिकित्सा के रूप में संगीत का उपचार भिन्न होता है।

कुछ वैज्ञानिकों के समूह ने संगीत के प्रभाव का अध्ययन किया है। शीर्षक है क्या चोखोव्स्की के नटक्रैकर सूइट या अन्य संगीत को बजाने से बच्चों के दिमाग में सुधार होता है?

इस अध्ययन ने इस मुद्दे पर और प्रकाश डाला। वैज्ञानिकों के इस समूह ने मोजार्ट को नहीं, बल्कि रूसी संगीतकार प्योत्र इलिच चोखोव्स्की को चुना। इस टीम का नेतृत्व वर्मान्ट सेंटर फॉर चिल्ड्रन, यूथ एंड फेमिलीज के प्रोफेसर जेम्स हुडजिएक ने किया।

टीम ने संगीत वाद्ययंत्र बजाने और मस्तिष्क के विकास के आपसी संबंधों पर अपने परिणाम जर्नल ऑफ अमेरिकन एकेडमी ऑफ चाइल्ड एंड एडोलेसेंट साइकिएट्री में प्रकाशित किए। उन्होंने अपने अध्ययन में वाद्ययंत्र बजाते हुए 232 बच्चों के मस्तिष्क पर नजर रखी। एम. आर. आई. के जरिए उन बच्चों के मस्तिष्क की स्कैनिंग की जाती थी।

स्कैन्स से पता चला कि संगीत बजाने वाले बच्चों के मस्तिष्क के कॉर्टेक्स की मोटाई में समय के साथ अंतर आता है। कॉर्टेक्स की मोटाई में यह अंतर कुछ विशेष क्षेत्रों में आया, जिसे क्रियाकारी क्षेत्र कहते हैं। यह क्षेत्र गतियों के नियंत्रण व तालमेल, कामकाजी याददाश्त, एकाग्रता पर नियंत्रण करता है और भविष्य के नियोजन में भूमिका निभाता है।

हुडजिएक टीम के प्रयोग का निष्कर्ष यह है कि वास्तव में संगीत मस्तिष्क के लिए वैसा ही व्यायाम है, जैसा जिम में हम शरीर के लिए करते हैं और यह अस्थायी या तात्कालिक नहीं है, बल्कि लंबे समय के लिए लाभ पहुँचाता है। हुडजिएक के अनुसार संगीत गाने-बजाने से दिमाग और संज्ञान क्षमता लाभान्वित होते हैं।

लिवरपूल विश्वविद्यालय के डॉ. एमी स्प्रे और डॉ. जी. मेयर ने अपने अध्ययन में बताया है कि संगीत का प्रशिक्षण विशेष तौर पर मस्तिष्क में बाएँ गोलार्द्ध में रक्त के प्रवाह को बढ़ा सकता है।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

यह क्षेत्र भाषा का स्थान है। जॉन हॉपकिंस विश्वविद्यालय के डॉ. चार्ल्स लिंब और उनके साथियों ने एक और रोचक अध्ययन किया। उन्होंने एक जैज समूह के संगीतकारों पर नजर रखी।

वाद्ययंत्रों के बटन आदि प्लास्टिक के बनाए गए थे; क्योंकि धातुएँ एम०आर०आई० में कठिनाई पैदा करती हैं। यह स्कैनिंग जैज समूह के प्रदर्शन के समय की गई थी। गायक-वादक एकदूसरे को सुनकर मौके पर ही बगैर किसी पूर्व-तैयारी के गा रहे थे, जैसा कि जैज समूह अक्सर करते हैं।

रविशंकर, रंजिनी-गायत्री, उमायलपुरम-घटम, निरिधर जैसे हमारे संगीतकार भी 'सवाल-जवाब' के रूप में ऐसा करते हैं। एक माने में यह एक संगीत संवाद होता है। इस आदान-प्रदान के दौरान किए गए उनके मस्तिष्क स्कैन से पता चला कि वे अपने दिमाग के उस हिस्से का इस्तेमाल कर रहे थे, जिसका संबंध बोलचाल से है।

हर गायक-वादक अपने साथी से जो सुनता है, उसको क्रियान्वित करने के लिए अपने व्याकरण क्षेत्र का उपयोग करता है, ताकि उसका जवाब नई सुर-ताल बजाकर दे सके। प्रयोग उत्साहवर्द्धक है। वर्तमान में संगीत चिकित्सापद्धति की तकनीकें

उतनी प्रभावकारी नहीं हो पाई हैं, जितनी प्राचीनकाल में थीं।

उस समय भिन्न-भिन्न व्याधियों के लिए भिन्न-भिन्न राग-रागिनियों का निर्धारण था। उदाहरण के लिए, मानसिक अस्थिरता एवं क्रोध शमन के लिए 'मल्हार', श्वास संबंधी तकलीफ—खाँसी, दमा, तपेदिक आदि में राग 'भैरव', रक्त अशुद्धि की स्थिति में राग 'असावरी' तथा 'मेदा', यकृत-प्लीहा वृद्धि में राग 'हिंडोल' का प्रावधान था।

भारतीय संगीत पर किए गए अनुसंधान एवं अध्ययन तो और भी चमत्कारिक हैं। भारतीय संगीत के अनुसार स्वरों में कुछ 22 श्रुतियाँ हैं। इन श्रुतियों के गायन एवं श्रवण द्वारा उत्पन्न होने वाले भौतिक एवं चेतनात्मक प्रभाव अनुपम हैं।

वैदिक काल में हमारे ऋषि संगीत विज्ञान के विशेषज्ञ थे। इसके माध्यम से अपनी आंतरिक शक्तियों को जाग्रत करते थे। संपर्क में आने वाले पीड़ित मानवता की सेवा करते थे। भक्ति-भावना का विश्वास करते थे। निस्संदेह संगीत में शक्ति है और उसका लाभ संगीत में रस लेने से अवश्य मिलता है। □

अरस्तू की एक कन्या थी। उसका नाम पीथिया था। अरस्तू के शिष्य सिकंदर की रानियाँ एक दिन गुरुगृह गईं और समुचित आतिथ्य के उपरांत उन्होंने पीथिया से विनम्रतापूर्वक पूछा—“क्या हम सभी चेहरे को अधिकाधिक सुंदर बनाने के लिए उबटन का उपयोग करें?”

इस पर पीथिया ने उन्हें कुछ गंभीर होकर उत्तर देते हुए कहा—“उनका सबसे बड़ा सौंदर्य है—लज्जा। उसे वे बनाए रखें तो अधिक उन्हें कुछ करने की आवश्यकता नहीं। सौंदर्यवान वही है, जो शीलवान भी है।”

► ‘नारी सशक्तीकरण’ वर्ष ◀

ईश्वरकृपा से सब संभव है



गुरुकृपा और निज पुरुषार्थ से संत एकनाथ को ब्रह्मोपलब्धि हुई थी। ब्रह्मोपलब्धि होने से वे यह सदैव अनुभव करते थे कि परब्रह्म किसी एक जगह में ही बँधा नहीं है। वह सर्वव्यापी है, सर्वज्ञ है और सर्वसाक्षी है। वह ब्रह्मांड के कण-कण में व्याप्त है। वह सबका है और सब उसके हैं।

इस प्रकार निजबोध व ब्रह्मोपलब्धि के फलस्वरूप वे संपूर्ण जगत् को ब्रह्मरूप ही देखते और जानते थे और सबके प्रति समदर्शी होकर तदनुकूल लोक-व्यवहार किया करते थे। उनकी समदर्शी दृष्टि व समदर्शी व्यवहार को लेकर कई रोचक व प्रेरक घटनाएँ हैं।

एक घटनाक्रम के अनुसार एक दिन संत एकनाथ के घर उनके पिता का श्राद्धकर्म संपन्न होने को था। श्राद्धकर्म को लेकर पूरी तैयारी की गई थी। विविध प्रकार के सुस्वादु, स्वादिष्ट व्यंजन बनाए गए थे। गाँव के सभी ब्राह्मणों को भोजन हेतु आमंत्रित किया गया था और संत एकनाथ आमंत्रित ब्राह्मणों की प्रतीक्षा में अपने दरवाजे पर खड़े थे। उसी समय चार-पाँच महार उनके दरवाजे की बगल से गुजर रहे थे।

उन्हें एकनाथ जी के घर से सुस्वादु व्यंजनों की गंध लगी। गंध पाकर वे लोग आपस में कहने लगे 'वाह! कैसी अच्छी गंध है। गंध ऐसी है कि भूख न हो, फिर भी भूख लग जाए। श्राद्ध को लेकर कितने अच्छे-अच्छे भाँति-भाँति के व्यंजन बने होंगे, पर ऐसे सुस्वादु व्यंजन भला हम गरीबों के भाग्य में कहाँ? ऐसे सुस्वादु व्यंजन तो ब्राह्मणों

के भाग्य में ही हैं, जिन्हें हमेशा ऐसे व्यंजन खाने को मिलते हैं। हम गरीबों को सुस्वादु व्यंजनों की गंध भी मिल जाए तो बड़ी बात है। इससे ज्यादा हम लोगों को और भला क्या मिल सकता है?'

अपने द्वार पर खड़े संत एकनाथ ये सारी बातें सुन रहे थे। उन लोगों की बातें सुनकर समदर्शी संत एकनाथ की आँखें भर आईं। उनके हृदय में दया व करुणा के दिव्य भाव उमड़ आए। वे तो संपूर्ण जगत् को ही समदृष्टि से देखते थे। फिर उनके लिए मनुष्य-मनुष्य में भेद कैसा?

वे तो यह जानते-मानते और अनुभव करते थे कि सबमें भगवान का वास है। सब भगवान के हैं और भगवान सबमें हैं। वे यह जानते-मानते और अनुभव करते थे कि जितने शरीर हैं, वे सब हरिमंदिर हैं; क्योंकि सबमें वही सच्चिदानंद परब्रह्म श्रीहरि विराज रहे हैं। फिर मनुष्य-मनुष्य में भेद क्यों और कैसा?

अतः उन्होंने तुरंत उन महारों को अपने घर बुलाकर बड़े प्रेम व आदर के साथ बिठाया और अपनी धर्मपरायणा पत्नी गिरिजाबाई से कहा कि सारा श्राद्धीय अन्न व सुस्वादु व्यंजन इन्हें खिला दो। भला धर्मपरायणा गिरिजाबाई भी इस कार्य में कहाँ देर करने वाली थीं।

वे तुरंत ही भोजन परोसने की तैयारी में जुट गईं, बल्कि सहृदया गिरिजाबाई तो यह भी कहने लगीं कि घर में अन्न बहुत है, ढेर सारे सुस्वादु व्यंजन बने हैं—इसलिए इन सबके बाल-बच्चों और स्त्रियों को भी बुलाइए और सबको परोसकर

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

खिलाया जाए। भगवान तो सर्वत्र हैं, सब में हैं, सभी प्राणियों में हैं। इसलिए आज इन्हें सुस्वादु व्यंजन खिलाकर तृप्त करने का बड़ा ही दिव्य अवसर है।

संत एकनाथ ने उन सबके लिए गिरिजाबाई के प्रेम को देखते हुए उन सबके बाल-बच्चों व स्त्रियों को भी अपने घर बुलवा लिया। सबको बड़े आदर से बिठाया गया। सबको विविध प्रकार के सुस्वादु व्यंजन परोसे गए। जो व्यंजन ब्राह्मणों के लिए बनाए गए थे, वे सभी उन लोगों को परोसे गए।

पति-पत्नी दोनों ने बड़े प्रेम से सबको खिलाया और ब्राह्मणों के लिए जो अक्षत-पुष्प, चंदन रखे गए थे, वे भी उन्हें अर्पित किए और उनका सत्कार किया। उन्हें खाते देख पति-पत्नी दोनों यह अनुभव कर रहे थे कि इन लोगों के रूप में साक्षात् श्रीहरि ही भोग ग्रहण कर रहे हैं और ऐसा अनुभव कर वे दोनों बड़े आह्लादित और हृदय से आनंदित भी हो रहे थे।

पति-पत्नी के ऐसे प्रेम को देखकर वे सभी लोग आनंद से भोजन ग्रहण कर रहे थे। जिस सुस्वादु भोजन की गंध भी उनके लिए दुर्लभ थी, वही व्यंजन उन सबको प्राप्त हुआ और उससे भी ऊपर संत एकनाथ और गिरिजाबाई के हार्दिक प्रेम से भरे शब्दों को सुनकर वे सभी अत्यंत प्रसन्न हुए।

भोजन के पश्चात उन सबको उन्होंने पान व कुछ पैसे देकर विदा किया और तत्पश्चात गिरिजाबाई ने घर-आँगन को धोकर स्वच्छ किया, सभी बरतनों को साफ किया और सारी सामग्री फिर से जुटाकर आमंत्रित ब्राह्मणों को खिलाने को फिर से रसोई तैयार की।

अपने पितरों के श्राद्ध-तर्पण के अवसर पर संत एकनाथ व उनकी पत्नी गिरिजाबाई ने बड़े प्रेम से ब्राह्मणों को खिलाने के लिए कई प्रकार के

सुस्वादु व्यंजन तैयार किए थे, पर ब्राह्मणों से पूर्व उन व्यंजनों को महारों, गरीबों को परोस दिए जाने के कारण सभी ब्राह्मण नाराज हो गए और एकनाथ जी के यहाँ खाने से इनकार कर दिया।

ब्राह्मणों द्वारा भोजन ग्रहण नहीं किए जाने पर पितरों के लिए आयोजित श्राद्ध-तर्पण भला पूर्ण कैसे हो सकेगा? यह सोचकर संत एकनाथ व उनकी पत्नी गिरिजाबाई बहुत चिंतित हुए। उन्होंने ब्राह्मणों को मनाने का भरसक प्रयास किया, पर वे मानने को कतई तैयार न हुए।

ब्राह्मणों के लिए बना व्यंजन भिखमंगों को खिलाना, यह ब्राह्मणों का घोर अपमान है और हमारे लिए भोजन उनके खाने के बाद बनाया गया। हम क्या जूठन खाएँगे? पहले वे खाएँ और बाद में हम खाएँगे? हम ऐसा अपमान बरदाश्त नहीं कर सकते—लगभग सभी ब्राह्मणों की ऐसी ही राय बनी हुई थी। यह स्थिति संत एकनाथ के लिए धर्मसंकट की स्थिति थी।

वे सोचने लगे अब हम करें तो करें क्या? ब्राह्मण मानने को तैयार नहीं हैं। सभी ब्राह्मणों ने सामूहिक रूप से यह निर्णय लिया कि एकनाथ जी के यहाँ श्राद्धकर्म में कोई नहीं जाएगा, भोजन करने कोई नहीं जाएगा, ताकि इनके पितर नरक में पड़े रहें। एकनाथ जी के द्वार पर लट्ठधारी दो युवक खड़े कर दिए गए, जिससे कोई भी उनके घर भोजन करने को न जा सके।

जब एकनाथ समझ गए कि उनके घर ब्राह्मण भोजन ग्रहण नहीं करेंगे तब उन्होंने बड़े ही भक्तिभाव से अपने आराध्यदेव, अपने भगवान का स्मरण किया और उनसे श्राद्धकर्म पूर्ण करने की प्रार्थना की। उन्होंने आत्मप्रेरणा से अपने पितरों का आवाहन किया, ताकि वे स्वयं पधारकर ब्राह्मणों के निमित्त बने भोजन को ग्रहण कर सकें।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

संत एकनाथ जी ने अपनी आत्मशक्ति से अपने पितरों के साथ-साथ जो ब्राह्मण उनके घर नहीं आ रहे थे उनके पितरों का भी आवाहन किया। आश्चर्य की बात यह हुई कि उनके आवाहन से वहाँ सभी पितर प्रकट हो गए। गाँव के ब्राह्मणों के पितरों की पंक्ति भी उनके घर में भोजन करने को बैठी।

एकनाथ जी ने सबको नमन-वंदन किया। हस्तप्रक्षालन, आचमन करे जाने वाले श्लोकों से एकनाथ जी का आँगन गुँज उठा। जो दो युवक लट्ठ लेकर बाहर द्वार पर खड़े थे, वे एकनाथ जी के घर से आ रही आवाज को सुनकर चौंक पड़े।

उन्होंने सोचा, हमने तो किसी ब्राह्मण को अंदर जाने ही नहीं दिया, फिर यह आवाज कैसी? दरवाजे की दरार से उन्होंने भीतर देखा तो वे दंग रह गए। अंदर तो पितरों की लंबी पंक्ति लगी थी और वे सभी भोजन कर रहे थे। जब उन्होंने ध्यान से देखा तो पता चला कि 'अरे! यह क्या? ये तो मेरे दादा हैं, परदादा हैं, पितामह हैं, जो यहाँ भोजन

कर रहे हैं। ये सभी तो मर चुके हैं, फिर वे कैसे प्रकट हो भोजन कर रहे हैं।' दोनों गाँव के ब्राह्मणों को खबर करने भागे।

उन्होंने कहा—“हम सबके पितर पितरलोक से आकर एकनाथ जी के आँगन में भोजन पा रहे हैं।” गाँव के सभी लोग दौड़ते-भागते हुए एकनाथ जी के यहाँ पहुँचे और देखा सभी पितर भोजन पूरा करके वहाँ से विदा हो रहे हैं और एकनाथ जी उन्हें विदा कर रहे हैं, उन्हें श्रद्धाभाव से धन्यवाद दे रहे हैं।

गाँव के सभी ब्राह्मण देखते ही रह गए। वे सभी एकनाथ जी के समक्ष हाथ जोड़ क्षमा माँगते हुए बोले—“महाराज! हमने आपको पहचाना नहीं। हमें माफ कर दीजिए।” सहृदय एकनाथ ने सबको सहर्ष माफ कर दिया।

सचमुच यदि हृदय में सच्ची भक्ति हो, परमात्मा के लिए प्रेम हो, मन निर्मल हो तो स्मरण करने मात्र से देवता प्रकट हो सकते हैं और आवाहन करने से पितर भी एकनाथ जैसे साधक, भक्त, संत के समक्ष प्रकट हो सकते हैं। □

शिष्यों ने गुरु से प्रश्न किया—“गुरुदेव! शुकदेव जी तो मुक्तात्मा थे, फिर राजा के यहाँ कथा कहने क्यों गए?”

गुरु बोले—“वत्स! जब शुकदेव परीक्षित के पास गए तो परीक्षित ने उनसे कथा कहने को नहीं कहा, उसने पूछा कि जिसका मरण समीप है, उसे क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए और उसने पूछा कि मानव का कल्याण कैसे हो सकता है? इसलिए शुकदेव बोले—पुत्र! तुमने सबके कल्याण की कामना की है, इसलिए मैं तुम्हें भागवत की कथा सुनाऊँगा। वैसे भी जिसका मरण कल्याणकारी हो जाता है, उसका जीवन भी मंगलमय ही रहा होगा।”

ऐसा बताते हुए गुरु बोले—“सुपात्र को ही सद्ज्ञान मिलता है। राजा परीक्षित सुपात्र थे, इसलिए इस महान घटना के अधिकारी बने।”

स्वाध्याय में प्रमाद न करें



जीवन को सफल, श्रेष्ठ एवं महान बनाने में स्वाध्याय की विशेष भूमिका रहती है। जो भी ज्ञानी लोग जीवन को सफल बना पाए हैं, समाज को दिशा दे पाए हैं, वे किसी-न-किसी रूप में स्वाध्याय को जीवन में विशेष स्थान देते रहे हैं। इसी के प्रकाश में उन्होंने पहले स्वयं के जीवन को गढ़ा व प्रकाशित किया। इसके अभाव में कोई भी महान या ज्ञानवान नहीं बन सकता, जीवन के गहन अर्थ को नहीं खोज सकता।

नित्यप्रति सद्ग्रंथों का स्वाध्याय करने से बुद्धि तीव्र होती है, प्रज्ञा का जागरण होता है और चित्त पर सूक्ष्म संस्कार पड़ते हैं, जिनके कारण अंतःकरण शुद्ध होता है। इसके साथ मनुष्य के बाह्यांतर चक्षु खुलने लगते हैं और व्यक्ति जीवन को इसके सम्यक् रूप में समझने लगता है। जीवन के प्रति यह तत्त्वदृष्टि ही उसे अज्ञानियों की भीड़ में अलग करती है और ऐसा व्यक्ति ही इस धरती पर अपने जीवन के उद्देश्य को सिद्ध करता है। इसके अभाव में लोग अंधकार में भटकने के लिए अभिशप्त होते हैं।

निरंतर स्वाध्याय में निरत व्यक्ति की वाणी ही सफल, सार्थक एवं प्रभावोत्पादक बनती है। अध्ययनशील व्यक्ति का कथन ही प्रामाणिक माना जाता है; क्योंकि वह तर्क एवं तथ्यों के साथ अपनी बात रखता है। जबकि स्वाध्याय से हीन व्यक्ति स्वयं की सही समझ नहीं रखता है और जगत् के प्रति भी वह सतही जानकारी रखता है। किसी विषय पर सार्थक संवाद एवं अधिकारपूर्वक प्रस्तुतीकरण एक स्वाध्यायशील व्यक्ति ही कर सकता है।

विश्व में असंख्य ऐसे व्यक्ति हुए जो विद्यालयों में अधिक अध्ययन नहीं कर पाए, किंतु स्वाध्याय के बल पर उन्होंने जीवन में ऐसा प्रकाश उत्पन्न किया, जो आज तक पीढ़ियों का मार्गदर्शन कर रहा है। महान कवि कालिदास, रविदास से लेकर संत कबीर, समर्थ गुरु रामदास, स्वामी रामकृष्ण परमहंस, परमपूज्य गुरुदेव आदि को स्कूली शिक्षा के हिसाब से अधिक अध्ययन का अवसर नहीं मिला, लेकिन इनकी स्वाध्याय की वृत्ति ने इन्हें विशिष्ट ज्ञान से संपन्न बनाया और ये जमाने का मार्गदर्शन करने में सक्षम हुए।

स्वाध्याय के इस महत्त्व को देखते हुए ही शास्त्रों में गुरुकुल से शिक्षा प्राप्त कर जीवन के रणक्षेत्र में पदार्पण कर रहे शिष्य से गुरु कहा करते थे कि—**स्वाध्यायान्मा प्रमदः** अर्थात् हे शिष्य! तू स्वाध्याय में प्रमाद मत करना। परमपूज्य गुरुदेव ने स्वाध्याय को मानसिक योग तक कहा है। जिस प्रकार प्रभु का नाम जपता हुआ योगी उस परमात्मा के प्रकाश रूप में तल्लीन हो जाता है, उसी प्रकार एकाग्र होकर सद्विचारों में, अध्ययन में तल्लीन हो जाने वाला अध्येता अक्षर ब्रह्म की सिद्धि से ज्ञानरूप प्रकाश का अधिकारी बनता है।

केवल योग ही नहीं, अध्ययन भी प्रभु का साक्षात्कार करने के उपायों में एक प्रमुख उपाय है। स्वाध्याय जैसे सरल एवं सरस योग में प्रतिष्ठित होने वाला व्यक्ति किसी-न-किसी रूप में अपने परमलक्ष्य मोक्ष को पाकर शाश्वत सुख का अधिकारी बनता है। वस्तुतः स्वाध्याय आत्मा का भोजन है। इसी में जीवन की समस्त समस्याओं के समाधान निहित हैं।

सितंबर, 2024 : अखण्ड ज्योति

स्वाध्याय हमारे चित्त में सूक्ष्म संस्कारों को सक्रिय कर चरित्र निर्माण की प्रक्रिया को तीव्र करता है, हमें इष्टप्राप्ति की ओर गतिशील करता है। योगसूत्र में महर्षि पतंजलि ने स्पष्ट कहा है कि स्वाध्याय की फलश्रुति इष्ट की प्राप्ति के रूप में होती है।

निस्संदेह रूप में स्वाध्याय स्वर्ग का द्वार और मुक्ति का सोपान है। ऋषि-मुनि, संत-महात्मा, महापुरुष-महामानव सभी स्वाध्यायशील रहे और दूसरों को भी इस मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करते रहे।

महान विचारक इमर्सन स्वाध्याय के बल पर ही कहा करते थे कि 'मुझे नरक में भेज दो, मैं वहाँ भी स्वर्ग बना दूँगा।' इसी तरह लोकमान्य तिलक कहते थे—'मैं नरक में भी उत्तम पुस्तकों का स्वागत करूँगा; क्योंकि इनमें वह शक्ति है कि जहाँ ये रहेंगी वहाँ अपने आप ही स्वर्ग बन जाएगा।'।

वस्तुतः स्वर्ग किसी स्थान विशेष का नाम नहीं, उत्कृष्ट मनःस्थिति का नाम है। व्यक्ति स्वाध्याय के आधार पर श्रेष्ठ विचारों से अपने चारों ओर एक ऐसे सूक्ष्मवातावरण का निर्माण करता है, जिसमें स्वर्गीय आनंद की अनुभूति रहती है और ऐसे में यदि प्रतिकूलताओं का सामना भी करना पड़ता है तो स्वाध्याय से प्राप्त अंतर्दृष्टि के आधार पर इनके दुष्प्रभावों को निरस्त करते हुए अपनी मनचाही सृष्टि का सृजन कर लेता है।

महात्मा गांधी कहा करते थे कि 'अच्छी पुस्तकें पास होने पर हमें भले मित्रों की कमी नहीं खटकती और मैं पुस्तकों का जितना अध्ययन करता हूँ, उतनी ही ये मुझे उपयोगी मित्र मालूम होती हैं।'।

आश्चर्य नहीं कि जैसे एक योगी ध्यान-साधना द्वारा दिव्य चेतना का सान्निध्य प्राप्त करता है, ठीक वैसे ही एक स्वाध्यायप्रेमी सतत श्रेष्ठ विचारों

के संग रमण करते हुए सूक्ष्मलोक में विचरण करता है, जिसके सान्निध्य में वह अपना दुःख-दरद, क्लेश सब कुछ भूल जाता है।

श्रेष्ठ पुस्तकें धैर्य, सात्वता और शांति प्रदान करती हैं। किसी ने ठीक ही कहा है कि सरस पुस्तकें पढ़ने से रोग-पीड़ित व्यक्ति को बड़ी शांति व संबल मिलता है।

जैसे स्नेहमयी जननी की मीठी-मीठी थपकियाँ बच्चों को मीठी नींद में सुला देती हैं, उसी प्रकार उत्तम पुस्तकों का अवलंबन तन व मन की पीड़ा को पूर्णतया शांत कर व्यक्ति को जीवन की गहन शांति एवं आनंद के साम्राज्य में प्रवेश दिला पाने की सामर्थ्य रखता है। इसलिए उत्तम पुस्तकों का संग्रह करना चाहिए, एक समृद्ध पुस्तकालय घर, परिवार एवं संस्था में होना चाहिए।

स्वाध्याय में किन पुस्तकों का चयन किया जाए, इन पर ध्यान रखने की आवश्यकता है। इनमें सर्वोपरि आध्यात्मिक ग्रंथ हैं, जिनमें ऋषि-मुनियों के सिद्ध ज्ञान का सार विद्यमान हो, जो जीवन के प्रति नीर-क्षीर विवेक दृष्टि को जाग्रत करते हों। फिर ऐसे महापुरुषों के जीवन, व्यक्तित्व, कर्तृत्व एवं शिक्षाओं से जुड़े सत्साहित्य को स्थान दिया जा सकता है, जो जीवन को श्रेष्ठ प्रेरणा देते हों तथा व्यक्ति जहाँ खड़ा है, उसे वहाँ से आगे बढ़ने की राह सुझाते हों।

परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जी द्वारा रचित युगसाहित्य इस संदर्भ में पठनीय एवं संगृहणीय है। नित्य इसके पाठ-पारायण एवं चिंतन-मनन के साथ इसके सार को जीवन में धारण करते हुए तमसो मा ज्योतिर्गमय की उक्ति को अपने जीवन में चरितार्थ किया जा सकता है, अंधकार में भटक रहे जीवन को सहज रूप से प्रकाशित किया जा सकता है और अपने साथ अपने प्रभाव-परिणाम को इसके प्रकाश से आलोकित किया जा सकता है। □

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

स्वस्थ-नीरोग जीवन के व्यावहारिक सूत्र



स्वस्थ शरीर जीवन की सबसे बड़ी संपदा माना गया है एवं यह सारे सुखों का आधार है। जबकि एक रोगी शरीर एक अभिशाप से कम नहीं होता, जिसमें व्यक्ति घुट-घुटकर जीने के लिए बाध्य होता है, स्वयं दुःखी-परेशान रहता है और न चाहते हुए भी दूसरों के लिए बोझ बन जाता है।

साथ ही वह दूसरों की सेवा-सहायता लेने के लिए विवश होता है, जो एक स्वाभिमानी व्यक्ति के लिए मरण के समान होता है। बीमारी के चलते आए दिन अस्पताल के चक्कर, रोग के उपचार में बढ़े-चढ़े खर्चे, सब मिलाकर व्यक्ति एवं परिवार को आर्थिक रूप से भी निचोड़कर रख देते हैं।

स्वास्थ्य के संदर्भ में बहुत कुछ व्यक्ति के हाथ में होता है। समय रहते यदि सावधानी बरती जाए, तो बहुत हद तक इस दुःखद स्थिति से बचा जा सकता है।

अधिकांश रोग असंयमित आदतों के कारण होते हैं, शरीर के प्रति बरती गई लापरवाहियों एवं मनमाने आहार-विहार के कारण होते हैं, जिसमें नकारात्मक चिंतन एवं तनाव की भी अपनी भूमिका रहती है। व्यक्ति चाहे तो कुछ सर्वमान्य जीवन-सूत्रों का अनुसरण करते हुए एक स्वस्थ एवं नीरोग जीवन जी सकता है।

इसमें पहला सूत्र अपनी दिनचर्या में सोने व जागने के क्रम को ठीक करना तथा अपनी नींद पर ध्यान देना है। गहरी नींद एक अमृत रसायन का काम करती है। रात भर में दिन भर की थकान व टूटन के कारण क्षतिग्रस्त तन व मस्तिष्क की कोशिकाओं व स्नायु संस्थान को दुरुस्त कर अगले दिन के लिए तैयार करती है।

ब्राह्ममुहूर्त में सोकर उठना दूसरा स्वर्णिम सूत्र है। आज की बिगड़ी जीवनशैली व आधुनिकता के दौर में यदि ब्राह्ममुहूर्त में उठना संभव न हो तो सूर्योदय से पूर्व उठने का क्रम तो बनाया ही जा सकता है, जो प्रातः 6 बजे के आस-पास का होता है।

इसके लिए आवश्यक हो जाता है कि सोने से 2-3 घंटे पूर्व मोबाइल का उपयोग बंद कर दें और प्रातः उठने से 3 घंटे तक इसे स्वयं से दूर ही रखें। इससे समय पर सोने का क्रम सरल हो जाएगा, पर्याप्त नींद संभव होगी तथा प्रातः उठकर महत्वपूर्ण कार्य निपटाने के साथ अनावश्यक तनाव से बचाव होगा और एक स्वस्थ दिनचर्या के साथ दिन का शुभारंभ होगा।

प्रातः उठते ही 2 गिलास कुनकुना पानी अवश्य पिएँ। इससे प्रातः पेट साफ होने में आसानी रहेगी। कब्ज की शिकायत करने वाले भी इस प्रयोग के अमोघ लाभ को अनुभव कर सकते हैं। यदि सीधा गरम पानी नहीं पी सकते हों, तो हलका-सा नमक इसमें डाल सकते हैं।

इसके साथ प्रातः पैदल टहलने की आदत डालें। हर आयु वर्ग का व्यक्ति इसे कर सकता है। बस, अपने आलस्य को त्यागने भर की आवश्यकता है।

नित्य 6000 से लेकर 10000 व इससे भी आगे 15000 कदम चलने का अभ्यास अपने समय व क्षमता के अनुरूप जोड़ सकते हैं। कुछ प्रातः, कुछ दोपहर, कुछ शाम को, तो कुछ भोजन के उपरांत रात को चहलकदमी कर सकते हैं और इसके प्रत्यक्ष लाभ को अनुभव कर सकते हैं।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

इसके साथ अपनी स्थिति के अनुरूप नित्य कुछ व्यायाम का क्रम अवश्य जोड़ें, जो शरीर को स्वस्थ रखने में बहुत सहायता करता है। योगासन से लेकर ट्रेकिंग, प्राणायाम से लेकर अन्य सूक्ष्म व्यायाम किए जा सकते हैं। आहार को यथासंभव हलका व सुपाच्य रखें, तो सरलता से पचेगा, आँतों पर अनावश्यक दबाव नहीं डालेगा।

आहार में फल-सब्जी ग्रहण करने को अधिक महत्त्व दें। यदि ये मौसमी हैं तो भरपूर पौष्टिकता सुनिश्चित होगी। चाय के स्वस्थ विकल्प के रूप में प्रज्ञापेय, ग्रीन टी, ब्लैक टी आदि को उपयोग कर सकते हैं। भोजन को शांत मनःस्थिति में खूब चबा-चबाकर खाएँ, ईश्वर को अर्पित करते हुए ग्रहण करेंगे तो यह भोग का रूप लेगा। आसानी से पचेगा और तन के साथ मन का भी पोषण करेगा। व्यक्ति को स्वस्थ तथा प्रसन्न रखेगा।

नित्य साफ हवा में कुछ देर भ्रमण के साथ प्राणायाम का अभ्यास करें। गहरे श्वास के साथ किया गया अभ्यास फेफड़ों को मजबूत बनाएगा जो सहज रूप में कई तरह के रोगों से इनका बचाव करेगा।

इसके साथ विचारों को सकारात्मक रखें, क्योंकि मानसिक संतुलन का स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव पड़ता है। इसके लिए सकारात्मक लोगों का संग करें। मोबाइल की माया से सावधान रहें। स्वाध्याय की आदत डालें, जो सकारात्मक विचारों का प्रेरकस्रोत साबित होगा।

अपने बैठने, लेटने व सोने के तरीके का भी ध्यान रखें—विशेषकर जो लंबे समय तक बैठकर काम करते हों। कंप्यूटर पर लंबे समय तक बैठने वाले अपने बैठने के तरीके के साथ आँखों का भी विशेष ध्यान रखें। निर्मल शीतल जल के छींटे देने के साथ इनको थोड़ा विश्राम देते हुए इनका व्यायाम किया जा सकता है। मनःस्थिति को सकारात्मक व आशावादी बनाए रखें तथा प्रसन्नचित्त रहें।

यह ध्येयनिष्ठ जीवन के आधार पर ही संभव होता है। नित्य स्वयं को समय दें, अपने कर्तव्य के प्रति सजग रहें, कर्तव्यपरायण जीवन जिएँ। यदि ऐसा संयमित, संतुलित, श्रमशील, स्वच्छ एवं सुव्यवस्थित जीवन संभव होगा तो स्वतः ही एक स्वस्थ, नीरोग जीवन की ठोस आधारशिला तैयार होगी।

कार्य की अधिकता व तनाव भी स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। अतः कार्य के बीच में थोड़ा आराम लें। एक समय पर एक ही कार्य करें। साथ ही एक अच्छी आदत को अवश्य विकसित करें। यह तनावहरण प्रयोग साबित होगा। रोज कुछ नया सीखते रहें। नई पुस्तकें, नया स्थान, नए लोग, नया ज्ञान जीवन के उत्साह को बनाए रखने में सहायक सिद्ध होंगे।

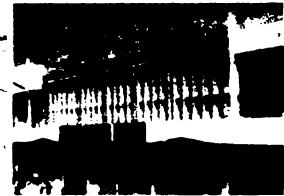
यदि शरीर में कहीं रोग पनप रहा हो, तो इसके उपचार में आलस्य-प्रमादजनित लापरवाही न बरतें। समय पर लिया गया उचित कदम स्वास्थ्य संबंधी भावी जटिलता व दुर्घटना से बचा सकता है।

आजकल जाँच के उन्नत उपकरण उपलब्ध हैं, जो प्रारंभिक अवस्था में ही पनप रहे रोगों का पता लगा लेते हैं, जिससे समय रहते सही उपचार किया जा सकता है। जितनी इस संदर्भ में लापरवाही बरतेंगे, उतना ही रोग फिर आगे चलकर जटिल होता जाता है और उसका उपचार भी उतना ही दुष्कर एवं जानलेवा हो सकता है।

अपने स्वास्थ्य संबंधी इन सरल सामान्य सूत्रों का जितना ध्यान रखेंगे, डॉक्टर व अस्तपाल के चक्कर लगाने से उतना ही बचेंगे और एक स्वस्थ व नीरोग जीवन के अधिकारी होंगे। इसके आधार पर जीवन के सभी सुखों के साथ इसके उच्चतर आयाम को भी साध सकेंगे, आखिर शरीरमाद्य खलु धर्मसाधनम्—अर्थात् स्वस्थ शरीर ही समस्त धर्मों का आधार है। □

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

संस्कारयुक्त शिक्षा का सर्वोच्च प्रतिमान देव संस्कृति विश्वविद्यालय



चाहे श्रेष्ठ, संस्कारी, सदाचारी व्यक्ति के निर्माण की बात हो या सभ्य समाज की रचना की बात हो या फिर राष्ट्र को सुखी, समृद्ध, सशक्त व समर्थ बनाने की बात हो, इन सबमें संस्कारयुक्त शिक्षा का महत्त्व निस्संदेह सर्वाधिक है, सर्वोपरि है।

संस्कारयुक्त शिक्षा का तात्पर्य उस शिक्षा से है, जो विषयगत विशेषज्ञता, विषयगत जानकारी प्रदान करने के साथ-साथ करुणा, प्रेम, सत्य, क्षमा, दया, शुचिता, पवित्रता, नैतिकता, ईमानदारी, जिम्मेदारी, समझदारी, बहादुरी आदि दिव्य भावों, सद्भावों, सद्गुणों को भर सके, जगा सके, जिससे व्यक्ति श्रेष्ठ, संस्कारी, सदाचारी, सत्यनिष्ठ, कर्तव्यनिष्ठ बन सके और अपने श्रेष्ठ व्यक्तित्व से स्वयं के साथ-साथ अपने परिवार, समाज व राष्ट्र के निर्माण में अपना श्रेष्ठ योगदान दे सके।

संस्कारयुक्त, संस्कारपरक, मूल्यपरक शिक्षा ही व्यक्ति के अंदर दिव्यभावों, सद्भावों, सद्गुणों को जगाकर, भरकर, उभारकर मानव को देवतुल्य बना सकती है और धरती को स्वर्ग बना सकती है। वैदिक गुरुकुल-शिक्षा प्रणाली में संस्कारयुक्त शिक्षा अर्थात् शिक्षा के साथ संस्कार पर अधिक बल दिया जाता था।

प्राचीन भारत के गुरुकुलों में विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास के लिए संस्कारयुक्त शिक्षा ही प्रदान की जाती थी। संस्कारयुक्त शिक्षा के कारण ही प्राचीन गुरुकुलों में, विद्यालयों में, महाविद्यालयों में, विश्वविद्यालयों में श्रेष्ठ व्यक्तियों, श्रेष्ठ व्यक्तित्वों का निर्माण होता था, उत्पादन होता था और ऐसे श्रेष्ठ व्यक्तियों, व्यक्तित्वों के कारण ही भारत हर क्षेत्र में दुनिया का सिरमौर हुआ करता था।

भारत को राजनीति के क्षेत्र में जहाँ चक्रवर्ती सम्राट होने का गौरव प्राप्त था तो वहीं आर्थिक क्षेत्र में सोने की चिड़िया और ज्ञान-विज्ञान व धर्म-अध्यात्म के क्षेत्र में जगद्गुरु होने का गौरव प्राप्त था। तभी तो गीतों में भी भारत का उसी रूप में गुणगान होता था।

भगवद्इच्छा से आने वाले वर्षों में भारत को फिर से अपनी उसी गौरव-गरिमा को प्राप्त करना है, जिसकी गूँज उपरोक्त बताए गए अनेकों लोकप्रिय गीतों में गुंजरित होती रही है। भारत को फिर से विश्वगुरु, जगद्गुरु, आर्थिक महाशक्ति की भूमिका का निर्वाह करना है, जिसमें निस्संदेह संस्कारयुक्त शिक्षा की भूमिका सर्वाधिक और सर्वोपरि सिद्ध होगी, इसमें राई-रत्ती भर भी संदेह की गुंजाइश नहीं है।

संस्काररहित, संस्कारविहीन शिक्षा निस्संदेह व्यक्ति को चिकित्सक, अध्यापक, प्राध्यापक, अभियंता, कलाकार, गीतकार, संगीतकार, वैज्ञानिक, अर्थशास्त्री, साक्षर, शिक्षित बना सकती है और बना भी रही है, पर वह शिक्षा व्यक्ति को श्रेष्ठ, संस्कारी, सदाचारी, कर्तव्यनिष्ठ, सत्यनिष्ठ नहीं बना सकती है।

एक श्रेष्ठ संस्कारी मनुष्य ही श्रेष्ठ अध्यापक, अभियंता, कलाकार, संगीतकार, विज्ञानी, अर्थशास्त्री आदि हो सकता है और श्रेष्ठ संस्कारी व्यक्ति का निर्माण मात्र पुस्तकीय जानकारी देने वाली और प्रतिभागी परीक्षाओं में सफल होने के सूत्र सिखाने वाली शिक्षा नहीं कर सकती है। यह काम तो सिर्फ और सिर्फ संस्कारयुक्त शिक्षा ही कर सकती है।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

मात्र पाठ्यक्रमों की विषयगत जानकारी हमें प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता दिला सकती है, पर जीवन की परीक्षा में सफल होना तो हमें संस्कारयुक्त शिक्षा ही सिखा सकती है। जीवन की उलझनों व गुत्थियों को सुलझाने के लिए तो जीवन-दृष्टि, जीवन दर्शन, जीवन बोध, आत्मबोध, आत्मविश्वास और आत्मबल होना चाहिए, जिसे हम विद्यायुक्त, संस्कारयुक्त शिक्षा के माध्यम से ही सीख सकते हैं।

संस्कारयुक्त शिक्षा ही व्यक्ति को एक कर्मठ, कर्मनिष्ठ, कर्तव्यपरायण, सेवापरायण, धर्मपरायण, ईमानदार, जिम्मेदार, समझदार नागरिक, अधिकारी, सेवक, उद्योगपति, वैज्ञानिक, अध्यापक, अभियंता, चिकित्सक, नेता, अभिनेता, एकाउंटेंट आदि बना सकती है।

यह काम मात्र पुस्तकीय ज्ञान, विषयगत जानकारी देने या सिखाने वाली शिक्षा नहीं कर सकती। आज जीवन के हर क्षेत्र में जीवनमूल्यों में जो गिरावट आई है, वह संस्कारविहीन शिक्षा की ही देन है। अनपढ़, निरक्षर की कौन कहे; साक्षर, शिक्षित और बड़ी-बड़ी डिग्रियाँ धारण करने वाले, ऊँचे पदों पर आसीन लोगों की भ्रष्टाचार और दुराचार में संलिप्तता उनमें नैतिक मूल्यों के नहीं होने के कारण ही संभव हो पाती है।

मात्र अक्षर ज्ञान को शिक्षा कहना 'शिक्षा' शब्द का अपमान नहीं तो और क्या है? जिस शिक्षा को पाकर मनुष्य व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र व विश्व के लिए समस्या ही बना रहा, तो फिर भला उस शिक्षा को 'शिक्षा' किस मुँह से कहा जाए? आतंक, अत्याचार, अनैतिकता, अनाचार, दुराचार व भ्रष्टाचार जैसे कुकृत्यों में लिप्त डिग्रीधारी लोगों को शिक्षित कैसे कहा जाए? वजह साफ है। उनमें शिक्षा तो पाई, पर संस्कार नहीं।

उनमें सिर्फ कंप्यूटर की, तकनीक की, विज्ञान की, अर्थशास्त्र की, राजनीतिशास्त्र की, प्रबंधन

की, गणित की, चिकित्सा की शिक्षा पाई, पर आत्मज्ञान व सदाचार की नहीं; करुणा, प्रेम, सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह और शुचिता की नहीं। उनमें शिक्षा के अंतर्गत विभिन्न विषयों की जानकारीयों, सूचनाएँ तो प्राप्त कर लीं, पर वे शिक्षा के अतिमहत्त्वपूर्ण पक्ष विद्या अर्थात् संस्कारों, सद्गुणों, सद्भावों से वंचित ही रह गए।

शिक्षा, विद्या अर्थात् संस्कार के बिना अधूरी है, एकांगी है। किसी भी राष्ट्र की सबसे बड़ी संपदा क्या है? धन-दौलत, हीरे-मोती, सोना-चाँदी। नहीं, हरगिज नहीं। किसी भी राष्ट्र की सबसे बड़ी संपदा सभ्य, सुसंस्कृत, चरित्रनिष्ठ, कर्मठ, कर्तव्यनिष्ठ नागरिक ही होते हैं; जिनके बल पर कोई राष्ट्र ऊँचा उठता व महान बनता है।

आज आवश्यकता है ऐसी शिक्षा की, जो संस्कारयुक्त हो, संस्कारविहीन नहीं; मूल्यपरक हो, मूल्यविहीन नहीं। आज प्राथमिक कक्षा से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक हमारे देश के नौनिहालों को, कर्णधारों को संस्कारयुक्त शिक्षा ही प्रदान की जानी चाहिए; क्योंकि शिक्षा जब संस्कार से, विद्या से युक्त होती है, तब वह प्रकाश बनकर व्यक्ति के जीवन में फूट पड़ती है और तब वह व्यक्ति न सिर्फ स्वयं के लिए बल्कि परिवार, समाज, राष्ट्र व पूरी वसुधा के लिए वरदान बन जाता है।

आज देश में शिक्षा की दुकानें तो बहुत हैं, जहाँ विद्यार्थियों से मोटा शुल्क वसूला जाता है, पाठ्यक्रमों को पूरा करने की खानापूर्ति होती है, डिग्रियाँ बनाई और बाँटी जाती हैं, पर वहाँ विद्यार्थियों में सद्भावों, सद्गुणों, संस्कारों को भरने, जगाने, उभारने पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता।

शैक्षणिक संस्थान व्यक्ति को श्रेष्ठ, सद्गुणसंपन्न व संस्कारवान बनाने की अपनी भूमिका में लगातार पिछड़ रहे हैं। व्यावसायिक दृष्टि मात्र होने के कारण विद्यार्थियों के समग्र

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

विकास में शैक्षणिक संस्थानों की कोई विशेष रुचि नहीं दिख रही। यह वास्तव में चिंता और चिंतन का विषय है।

इसी चिंतन को लेकर इस युग के महान चिंतक, ऋषि, गायत्री के सिद्धसाधक, इस युग के विश्वामित्र, प्रख्यात स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, महान तपस्वी, महान अध्यात्मविद्, महान दार्शनिक, महायोगी, 3200 से अधिक पुस्तकों के रचनाकार, वैज्ञानिक अध्यात्मवाद के पुरोधा, '21वीं सदी उज्ज्वल भविष्य, 21वीं सदी नारी सदी' के उद्घोषक व युगतीर्थ गायत्री तीर्थ शांतिकुंज एवं अखिल विश्व गायत्री परिवार के संस्थापक, संरक्षक वेदमूर्ति पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जी ने भी देश में ऐसे ही विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों के होने की आवश्यकता महसूस की जहाँ आधुनिक व तकनीकी शिक्षा देने के साथ-साथ संस्कारयुक्त शिक्षा के द्वारा व्यक्ति के अंदर सोये हुए देवत्व को जगाकर उसे मानव से महामानव, देवमानव, देवता बनाया जा सके और इस राष्ट्र को सशक्त, समर्थ, समृद्ध बनाया जा सके और इस धरती को, वसुधा को स्वर्ग-सा सुंदर बनाया जा सके।

उनकी यह स्पष्ट धारणा थी कि 'धरती पर जब भी नया जीवन अंकुरित हुआ, जब भी नया युग आया, तो उसकी शुरुआत विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों से हुई। जब भी नए मनुष्य गढ़े गए, उन्हें दिशा विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों से ही मिली।'।

अतः देश में ऐसे विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय होने चाहिए, जो मात्र विषयगत जानकारी देने, पाठ्यक्रमों को पूरा करने, परीक्षा लेने और डिग्रियाँ बाँटने का हाट-बाजार न होकर सच्चे मनुष्य, बड़े मनुष्य, महान मनुष्य और सर्वांगपूर्ण मनुष्य बनाने की आवश्यकता पूर्ण कर सकें और जहाँ के ऊर्जावान आचार्य व प्राणवान विद्यार्थी मिलकर प्राण-ऊर्जा का ऐसा प्रवाह पैदा कर सकें,

जिससे पूरे देश का प्राण लहलहा उठे व सारी धरती पर जीवनमूल्यों के वरदान बरसने लगें। जहाँ शिक्षा ही नहीं, संस्कार का भी अर्जन-उपार्जन हो सके।

वास्तव में अखिल विश्व गायत्री परिवार के द्वारा संचालित विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों के समग्र विकास के लिए आधुनिक शिक्षा के साथ-साथ संस्कारयुक्त शिक्षा पर विशेष बल दिया जा रहा है।

अखिल विश्व गायत्री परिवार, शांतिकुंज, हरिद्वार के द्वारा संचालित देव संस्कृति विश्वविद्यालय भी युगऋषि के इसी दिव्य स्वप्न की साकार प्रतिमूर्ति है। वर्ष 2002 में देवभूमि उत्तराखंड के हरिद्वार जनपद में, गंगा की गोद व हिमालय की छाया में स्थापित यह विश्वविद्यालय आधुनिक शिक्षा के साथ संस्कारयुक्त शिक्षा, शिक्षा के साथ विद्या का एक ग्लोबल मॉडल है।

सच कहें तो यह विश्वविद्यालय शिक्षा के क्षेत्र में एक अभिनव प्रयोग है। यह विश्वविद्यालय संस्कारयुक्त शिक्षा, मूल्यपरक शिक्षा, वैज्ञानिक अध्यात्मवाद, जीवन प्रबंधन, शिक्षा के साथ विद्या, दीक्षा के साथ दीक्षारंभ, प्राच्य के साथ आधुनिक शिक्षा व उन्नयन आदि पाठ्यक्रमों, कार्यक्रमों व विविध प्रयोगों के रूप में शिक्षा जगत् में निश्चित ही एक नूतन व अभिनव प्रयोग है।

जनता का अंशदान व अनुदान ही इस विश्वविद्यालय की सभी गतिविधियों के वित्तीय पोषण का आधार है। पूरी तरह से आवासीय इस विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों की दिनचर्या प्राचीन गुरुकुलों की तरह ही आध्यात्मिक है, जिसमें नित्य प्रातः जागरण, प्रार्थना, यज्ञ, योग, ध्यान, स्वाध्याय, सत्संग, सात्त्विक आहार आदि क्रियाकलाप शामिल हैं।

एक और महत्त्वपूर्ण बात जो इस विश्वविद्यालय को खास बनाती है, वह है यहाँ के प्रत्येक पाठ्यक्रम के साथ इंटरनशिप के माध्यम से

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄
सितंबर, 2024 : अखण्ड ज्योति

कुछ समय के लिए अनिवार्य रूप से की जाने वाली समाजसेवा।

यह ऐसी प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से विद्यार्थियों को अपने विषय की सामाजिक उपयोगिता का बोध होने के साथ उसके अंदर सामाजिक दायित्व की भावना का विकास होता है। इसमें विद्यार्थियों को पौधारोपण, गंगा सफाई, स्वच्छता, आपदा पीड़ितों की सेवा आदि कार्यों से जोड़कर उन्हें समाज के प्रति अपने कर्तव्य का बोध भी कराया जाता है।

योग, मनोविज्ञान, हिंदी, संस्कृत, अँगरेजी, पत्रकारिता, संस्कृत, दर्शनशास्त्र, कंप्यूटर, आई० टी०, हिंदू अध्ययन, ग्राम प्रबंधन, मेडिसनल प्लांट, ऐनिमेशन, पर्यावरण, पर्यटन आदि विषयों में स्नातक, परास्नातक व पी-एच०डी० स्तर की शिक्षा आदर्श एवं निष्णात अध्यापकों के द्वारा प्रदान की जाती है।

विद्यार्थियों के बौद्धिक विकास के साथ-साथ उनके भावनात्मक व आत्मिक विकास पर भी अधिक जोर दिया जाता है। यहाँ के स्नातक, परास्नातक, डिप्लोमा, बी० एड०, पी-एच०डी० आदि डिग्रीधारी विद्यार्थी देश एवं विदेश में अपनी प्रतिभा का परचम फहरा रहे हैं और राष्ट्र को गौरवान्वित कर रहे हैं।

बहुत अल्प समय में ही इस विश्वविद्यालय ने सफलता के नए कीर्तिमान गढ़े हैं। 100 से अधिक अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालयों से शैक्षणिक अनुबंध किए हैं एवं कई राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त किए हैं। ये सब बहुत ही अल्प समय में इसलिए संभव हो सका, क्योंकि इस विश्वविद्यालय की स्थापना के पीछे व्यावसायिक नहीं, बल्कि आध्यात्मिक दृष्टि है।

निष्कर्ष रूप में कहें तो इस विश्वविद्यालय का उद्देश्य देश के हजारों विश्वविद्यालयों की भीड़ में एक और नए विश्वविद्यालय के रूप में

शामिल होने या खड़े होने का नहीं है, वरन राष्ट्र के युवाओं को निखार-सँवारकर उनमें श्रेष्ठतम नागरिक, प्रखर राष्ट्रभक्त एवं विषय विशेषज्ञ बनाने के साथ-साथ उन्हें देवमानव बनाना, यही मूल उद्देश्य है।

यहाँ अध्ययनरत भारत के लगभग सभी राज्यों व विश्व के कई देशों के विद्यार्थी इस विश्वविद्यालय की विश्वभर में बढ़ती लोकप्रियता व प्रसिद्धि के जीवंत प्रमाण हैं।

इस विश्वविद्यालय की विशिष्टता के कारण ही इस विश्वविद्यालय में देश के कई राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति व कई राज्यों के मुख्यमंत्री, राज्यपाल, शिक्षाविद्, वैज्ञानिक, वरिष्ठ पदाधिकारी, अधिकारी आदि पधार चुके हैं।

आने वाले समय में यह विश्वविद्यालय निश्चित ही पूरी दुनिया के विश्वविद्यालयों के लिए एक रोल मॉडल के रूप में उभरेगा; क्योंकि

उस ईश्वररूपी गुरु में समस्त कर्मों का अर्पण ईश्वर प्रणिधान है।

आज देश में ऐसे विश्वविद्यालयों की सर्वाधिक आवश्यकता है।

इस विश्वविद्यालय की शाखाएँ, महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों के रूप में देश के अन्य राज्यों व अन्य देशों में भी स्थापित होंगी; क्योंकि आज सर्वत्र ऐसे ही महाविद्यालयों व विश्वविद्यालयों की आवश्यकता है।

सचमुच संस्कारयुक्त शिक्षा का सर्वोच्च प्रतिमान है—देव संस्कृति विश्वविद्यालय। अखिल विश्व गायत्री परिवार के द्वारा शिक्षा के साथ-साथ साधना, स्वास्थ्य, स्वरोजगार, पर्यावरण, नारी सशक्तीकरण, गोसेवा, पर्यावरण संस्कार व अन्न-क्षेत्र आदि क्षेत्रों में भी समाजसेवा के कार्य व्यापक पैमाने पर चलाए जा रहे हैं।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

निराशा से आशा की ओर बढ़ने का राजमार्ग

जीवन में आगे बढ़ने के लिए उत्साह का बहुत महत्त्व है, उत्साह से बढ़कर कोई बल नहीं और एक उत्साही व्यक्ति के लिए कुछ भी असंभव नहीं। इसके विपरीत निराशा एक अभिशाप है, एक महाव्याधि है, जो व्यक्ति की संपूर्ण मानसिक एवं आध्यात्मिक शक्तियों को कुंद कर देती है। निराशा एक तरह से पाप है, जिसके चंगुल में फँसा व्यक्ति अपने सारे प्रयास छोड़ देता है। अपने चरम पर निराशा आत्महत्या जैसे आत्मघाती कदम तक उठाने से नहीं चूकती। इस रूप में निराशा एक अपराध है।

इतिहास साक्षी है कि जीवन की दिशा मोड़ने वाले, युग को नई राह दिखाने वाले व्यक्तियों के जीवन में निराशा के तमाम अवसर आए, प्रतिकूलताओं के भीषण थपेड़ों के बीच से उनको गुजरना पड़ा, लेकिन उन्होंने निराशा को हावी नहीं होने दिया और आशा तथा उत्साह का दामन थामते हुए आगे बढ़ते रहे और अंततः अपने निर्धारित लक्ष्य को सिद्ध कर पाए।

जीवन में निराशा-हताशा के कई कारण हो सकते हैं, उन पर विचार करते हुए, इनके पार होने के मार्ग का संधान किया जा सकता है। जीवन से बढ़ी-चढ़ी आशा-अपेक्षाएँ पालना, अपनी क्षमता को आँके बिना अति महत्वाकांक्षी लक्ष्य को ठान लेना और फिर न पूरा होने पर निराशा के अँधेरे में खो जाना, यह हताशा का एक प्रमुख कारण रहता है।

इसके साथ दूसरों से तुलना-कटाक्ष में उलझना, अनावश्यक प्रतिद्वंद्विता में पड़ना भी निराश होने का प्रमुख कारण है। इनका परिणाम जीवन में असफलता के साथ निराशा-हताशा एवं नकारात्मक

भावदशा को जन्म देता है और आगे बढ़ने का उत्साह एवं आत्मविश्वास समाप्त हो जाता है।

इनकी जगह यदि अपनी मौलिकता पर, वास्तविकता पर ध्यान दिया गया होता तो बेहतर होता। संतोष व उत्साह के साथ हम मंजिल तय कर रहे होते।

यथार्थ को स्वीकार नहीं करना इसी से जुड़ा तथ्य है, जो व्यक्ति को निराशा के गर्त में धकेलता है। परिस्थिति व समाज के साथ अपनी सत्यता को स्वीकार किए बिना अपनी कल्पना और मनोभावों की दुनिया में विचरण करना भी निराशा को निमंत्रण देना है। सारी दुनिया को अपने इशारे पर चलने के लिए विवश देखना, एक विकृत सोच है, अहंकेंद्रित भ्रम है, जिससे बाहर निकलना अभीष्ट है। अपने यथार्थ को स्वीकार करने में ही भलाई है।

अपने अकिंचन से भी सत्य को स्वीकार कर इसे निखारने में समझदारी है, जिसके आधार पर मौलिक सफलता की मंजिल खड़ी की जा सकती है। कितने सफल व्यक्ति जहाँ खड़े थे, वहीं से छोटा-सा कार्य उन्होंने आरंभ किया और फिर उत्तरोत्तर रूप से इसमें सुधार करते हुए उन्नति के शिखर तक पहुँचे; क्योंकि इनकी शुरुआत यथार्थ के कठोर धरातल से ही हुई थी।

बीते हुए जीवन की गलतियों, हानि, अपमान एवं पीड़ाओं को याद करना, उन्हें नहीं भुला पाना भी व्यक्ति को निराशा के अँधेरे में धकेलते हैं। जीवन के इन अँधेरे पक्षों को कोई नकार नहीं सकता, लेकिन सोचने पर स्पष्ट होता है कि बीते हुए समय को वापस नहीं लाया जा सकता, अतः

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄
सितंबर, 2024 : अखण्ड ज्योति

उनसे आवश्यक सबक सीखते हुए वर्तमान को सजाने-सँवारने में ही समझदारी है। पुरानी गलतियों का परिमार्जन अभीष्ट है। खोदे गड्ढों को भरकर नए निर्माण का प्रयास उचित है।

थोड़ा विवेक के साथ काम करें, तो भूतकाल की पीड़ा, वेदना व हानि को अपने उत्कर्ष की सीढ़ी बनाया जा सकता है। फिर दुनिया में किसे हानि, वेदना, दुःख, अपमान नहीं सहना पड़ता। यदि हम चारों ओर नजर उठाकर देखें, विषमताओं की अनगिनत अग्निपरीक्षाओं को पार कर मंजिल तक पहुँचे महापुरुषों की जीवनियों पर गौर करें तो पाएँगे कि अपना दुःख, कष्ट, पीड़ा एवं संघर्ष तो उनके समक्ष कुछ भी नहीं। वे आशा, ढाढ़स, सांत्वना देते प्रतीत होंगे।

शारीरिक रोग, दुर्बलता, अपंगता एवं प्रतिकूलता भी उत्साह को तोड़ने वाले स्वाभाविक कारण बनते हैं, लेकिन इस संसार में कोई भी चीज स्थायी नहीं रहती और फिर यहाँ हर रोग व समस्या का उपचार है, समाधान है।

इस विश्वास के साथ यदि चरणबद्ध रूप से आगे बढ़ते गए, तो जीवन में शनैः-शनैः स्वास्थ्य का अर्जन होगा, अपनी दुर्बलता व अपंगता को भी शक्ति में रूपांतरित करने के सूत्र-समाधान मिलेंगे तथा जीवन में आशा का संचार होगा, नए उत्साह के साथ जीने के कारण हाथ लगेंगे और अंततः प्रतिकूलताएँ; अनुकूलता का रूप ले लेंगी।

बिगड़ी जीवनशैली भी निराशा का एक बड़ा कारण पाई गई है; क्योंकि इसके साथ एक तो स्वास्थ्य संबंधी तमाम विसंगतियाँ पैदा होती हैं और दूसरा इनसे उपजा तनाव, जीवन को बद से बदतर स्थिति की ओर धकेलता है। अपने खान-पान व जीवनचर्या में अभीष्ट सुधार कर अपने स्वास्थ्य पर कार्य करते हुए जीवन की लय को वापस लाया जा सकता है।

इसके साथ संतुलित एवं यथासंभव प्राकृतिक जीवन जीते हुए इसमें नए आयाम जोड़े जा सकते हैं। निराशा का एक कारण, ईश्वरीय अस्तित्व एवं उसकी न्याय-व्यवस्था पर आस्था का अभाव भी रहता है, जिसके कारण मात्र अहंकार के बल पर जीवन की नैया को खेने का भाव रहता है; जबकि मानवीय पुरुषार्थ एवं शक्ति की एक सीमा रहती है।

ईश्वरीय अवलंबन लेने पर जीवन का भार बहुत कुछ हलका हो जाता है, जबकि ईश्वर को भुलाकर अपने बारे में बहुत अधिक सोचते रहना निराशा का कारण बनता है। फिर जीवन में बहुत कुछ समय, काल एवं परिस्थिति पर टिका होता है। अतः सुखी, सफल एवं उत्साहयुक्त जीवन का राज स्वयं को भूलकर अपने कर्तव्य कर्मों में निमग्न रहना है।

.....
विकारहेतौ सति विक्रियन्ते येषां न चेतासि त एव धीराः।

अर्थात् विकार का कारण सामने आने पर जिनके मन में विकार नहीं आता, वे ही धीर होते हैं।

—कुमारसंभव 1/59

.....
छोटी-छोटी सफलताओं को अर्जित करते हुए बड़ी उपलब्धियों के हकदार बनना श्रेष्ठ है। समय के साथ सफलताएँ, विभूतियाँ एवं सिद्धियाँ सब जुड़ती जाती हैं। जो सोचा था, उसे क्रियान्वित करने की क्षमता आती है और ऐसे संयोग घटित होते हैं, जिनमें लगता है कि निर्धारित मंजिल की ओर ईश्वरीय विधान आगे बढ़ा आ रहा है।

हाँ! यह अवश्य है कि इस मंजिल तक पहुँचने से पहले व्यक्ति को विषमता के कठिन दौर से भी गुजरना पड़ता है, लेकिन आशा का दामन थामे व्यक्ति निराशा-हताशा के अंधकार को चीरते हुए अपनी निर्धारित मंजिल तक पहुँचता है। □

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

चक्षुदेवता को जिसने सिद्ध कर लिया, उसके लिए प्राणमय कोश में सन्निहित सिद्धियाँ करतलगत ही समझी जानी चाहिए। गुरुदेव ने आज्ञाचक्र को जाग्रत करने की, प्राण में प्रखरता लाने की, क्रिया-प्रक्रिया की जरूर है; पर उसमें जो खाद-पानी लगा, वह नेत्रों को पवित्र व्रती बनाए रखने और असुरता द्वारा उन्हें पाप-विद्ध न होने देना ही सफलता का प्रधान कारण रहा है।

नई सृष्टि उत्पन्न कर सकने की, नया संसार बसाने की स्फुरणा, इसी स्थल पर विराजमान है। गुरुदेव ने इस शिव केंद्र को पवित्रतम देव प्रतिमा की तरह ही समझा और उस शक्तिस्रोत का एक भी कण अपव्यय न करके ऊर्ध्वरेता की तरह ब्रह्म स्फुरणा में ही प्रयुक्त किया।

विज्ञानमयकोश के जागरण में मिली सहायता वस्तुतः 5 दिव्य देवियाँ हैं, जो उन्हें व्यभिचारिणी का श्रेय वे तद्विषयक साधना पद्धति को कम वेश्या के कुपथ पर नहीं धकेलता, उन्हें मातृवत् ब्रह्मरेतस् निष्ठा को अधिक दिया करते थे। 5 श्रद्धा के साथ संपूजित करता है, उसके पास सिद्धियों तत्त्वों के प्रकाश को स्फुटित करने वाली 5 ज्ञानेन्द्रियाँ की कमी नहीं रहती। □

एक संत बियावान में झोंपड़ी बनाकर रहते थे। वे राह से गुजरने वाले पथिकों की सेवा करते और भूखों को भोजन कराया करते थे।

एक दिन एक बूढ़ा व्यक्ति उस राह से गुजरा। उन्होंने हमेशा की तरह उसे विश्राम करने को स्थान दिया और फिर खाने की थाली उसके आगे रख दी। बूढ़े व्यक्ति ने बिना प्रभुस्मरण किए भोजन प्रारंभ कर दिया।

जब संत ने उसे यह याद दिलाया तो वह बोला—“मैं किसी भगवान को नहीं मानता।” यह सुनकर संत को क्रोध आ गया और उन्होंने बूढ़े व्यक्ति के सामने से भोजन की थाली खींचकर उसे भूखा ही विदा कर दिया।

उस रात उन्हें स्वप्न में भगवान के दर्शन हुए। भगवान बोले—“पुत्र! उस वृद्ध व्यक्ति के साथ तुमने जो दुर्व्यवहार किया, उससे मुझे बहुत दुःख हुआ।” संत ने आश्चर्य से पूछा—“प्रभु! मैंने तो ऐसा इसलिए किया कि उसने आपके लिए अपशब्दों का प्रयोग किया।”

भगवान बोले—“उसने मुझे नहीं माना तो भी मैंने आज तक उसे भूखा नहीं सोने दिया और तुम उसे एक दिन का भी भोजन न करा सके।”

यह सुनकर संत की आँखों में अश्रु आ गए और स्वप्न टूटने के साथ उनकी आँखें भी खुल चुकी थीं।

जलचर जीवों का संसार



पृथ्वी पर कई स्तर के जीवों में जलचर जीवों का अपना संसार है, जिनमें कई रहस्य-रोमांच भरे तथ्य छिपे हैं। बहुतों से तो खोजी इनसान परिचित हो चुका है और कुछ से अभी परिचय होना शेष है।

जल में रहने वाले जीवों में मैनाटी एक ऐसा ही स्तनपायी जीव है, जिसका बछड़ा माँ का दूध पीता है, जो स्वयं जल की सतह पर 8-10 घंटे घास चरता है, जिसके कारण इसे समुद्री गाय भी कहा जाता है। हालाँकि गहरे समुद्र के बजाय ये छिछले जल में, नदियों, झरनों के मुहानों तथा समुद्री तटों एवं अंतर्देशीय जलमार्गों में विचरण करती हैं।

इनकी तीन प्रमुख प्रजातियाँ हैं—वेस्ट इंडियन, अफ्रीकी और अमेजोनियन मैनाटी। वेस्ट इंडियन मैनाटी मैक्सिको की खाड़ी और कैरेबियन में तथा ब्राजील और वेनेजुएला के तटों पर रहती हैं। पश्चिमी अफ्रीकी मैनाटी अफ्रीका के पश्चिमी किनारे पर, सेनेगल से अंगोला के तटों पर पाई जाती हैं।

अमेजोनियन मैनाटी दक्षिण अमेरिका में अमेजन बेसिन के तटों पर विचरण करती हैं। समुद्री तटों पर वे अधिकांशतः लैगून और मैंग्रोव जैसे उथले जल में रहती हैं, जहाँ वे आसानी से चरने से लेकर अपने रहने के संरक्षित आवास पा लेती हैं। यह कितने साल पुरानी हैं व कैसे थल से जल में वास करने लगीं, यह एक रोचक तथ्य है।

माना जाता है कि मैनाटी छह करोड़ वर्षों से धरती पर विद्यमान हैं और लाखों वर्ष पहले तक यह भूमि पर रहती थीं, फिर जब भूमि पर जल बढ़

गया तो इन्होंने स्वयं को जलीय जीवन के अनुरूप ढाल लिया। इनके पैर के फ्लिपर्स बन गए, तैरने के लिए पीछे पूँछ उग आई।

लाखों वर्षों तक सागरीय तटों पर वास करती मैनाटी विषमताम परिस्थितियों का सामना करते हुए आज अस्तित्व के अंतिम चरणों में है, जहाँ उसकी संख्या कुछ हजार तक सीमित रह गई है। यह जलीय शाकाहारी जीव धीमी गति से चलने वाला कोमल जीव है, जो अपना अधिकांश समय नदी या सागरीय तटों की उथली गहराई में घास चरने में बिताता है, इसलिए इसे समुद्री गाय का नाम भी दिया गया है।

हालाँकि ये छोटी ह्वेल मछली की तरह दिखती हैं, जिनके दो पैर (फ्लिपर्स) और एक पूँछ होती है और इन्हें हाथी के समीप का जीव माना जाता है। इनका चेहरा काफी हद तक गाय से मिलता है, जो जलीय तट पर दिन के अधिकांश समय घास को चरती रहती हैं। ये समुद्री जल में पाई जाने वाली ईलग्रास, हरे पत्ते और अन्य समुद्री घास खाती हैं, जो इनके शरीर के भार का 10 प्रतिशत से 15 प्रतिशत के बराबर होता है।

इस तरह 400 किलो की मैनाटी 40-60 किलो के बीच चारा खा जाती है। इसके दाँत जीवन भर बढ़ते रहते हैं। बाहरी कान नहीं होते, आंतरिक कान बड़े होते हैं व सुनने में सक्षम होते हैं तथा आँखें छोटी, लेकिन दृष्टि बेहतरीन होती है।

आपसी संवाद के लिए ये चीखती हैं व सीटी बजाती हैं। इनका जहाँ 6-8 घंटे का समय चरने में बीतता है, वहीं इनका आधा दिन सोते हुए बीतता

है। सामान्यतया हर 3 से 5 मिनट में इनको श्वास लेने के लिए सतह पर आना पड़ता है, अति सक्रिय अवस्था में हर 30 सेकेंड में इनको श्वास लेना पड़ सकता है और विश्राम की अवस्था में ये पानी के नीचे 20 मिनट बिना श्वास लिए रह सकती हैं।

इनकी तैरने की गति 5-7 किलोमीटर प्रति घंटे रहती है, लेकिन आवश्यकता पड़ने पर 30 किलोमीटर प्रतिघंटे की गति से भी तैर सकती हैं। मादा मैनाटी 2 वर्ष के अंतराल में बछड़े को जन्म देती हैं और एक बार में इनका एक बछड़ा होता है।

मादा मैनाटी का जब प्रजनन का समय आता है, तो नर मैनाटी का झुंड मादा का पीछा करता है, जो 3 सप्ताह तक चल सकता है। गर्भवती होने पर मादा एक बछड़े को जन्म देती है, माँ और शिशु के बीच बहुत मजबूत संबंध देखने को मिलता है।

पैदा होते ही 1 घंटे तक माँ सतह पर शिशु के साथ रहती है, जब तक कि वह श्वास नहीं लेता। शिशु का वजन 30 किलो के लगभग रहता है। जो माँ का दूध पीकर पोषण पाता है। कम-से-कम 1 वर्ष तक माँ बछड़े का पालन-पोषण करती है और 2 वर्ष तक दोनों एक साथ रहते हैं।

इस समुद्री गाय की आयु 60 से 70 वर्ष तक रहती है। औसतन एक मादा मैनाटी 2 से 5 वर्ष में एक बछड़े को जन्म देती है। मैनाटी एक भारी-भरकम जीव है। भूरे रंग की इस समुद्री गाय की लंबाई 13 फीट तक हो सकती है, परंतु औसतन लंबाई 10 फीट रहती है। इसका भार 400 से 600 किलो हो सकता है। इसका पेट सामान्य आकार का होता है, लेकिन आँत की लंबाई बहुत अधिक रहती है। मैनाटी की आँत की औसतन लंबाई 45 मीटर तक होती है।

सामान्यतया जीवों के गले में 7 कशेरुकाएँ होती हैं, लेकिन मैनाटी के गले में मात्र 6 कशेरुकाएँ रहती हैं, जिनके कारण ये गरदन को मोड़ नहीं पाती। पीछे देखने के लिए इन्हें अपने पूरे शरीर को घुमाना पड़ता है।

धरती पर करोड़ों वर्षों से विचरण कर रहे इस शांतशालीन जीव का अस्तित्व आज संकट में है। सन् 2016 तक इनकी संख्या तेरह हजार तक आँकी गई थी, जिसमें 6300 अकेले फ्लोरिडा के समुद्र में थे। वर्ष 2017 में यू एस फिश एंड वाइल्ड लाइफ सर्विस ने फ्लोरिडा उपप्रजाति सहित वेस्ट इंडियन मैनेट को लुप्तप्राय प्रजाति के दायरे में डाल दिया है।

इस अद्भुत शांत जीव की संख्या वैज्ञानिकों के हिसाब से इस समय मात्र 10,000 शेष रह गई है। इसकी सीखने व समझने की क्षमता डॉल्फिन मछली की तरह होती है। आश्चर्य नहीं कि मनुष्य के साथ इसका व्यवहार दोस्ताना रहता है।

इस शांत एवं शाकाहारी जीव का कोई प्राकृतिक शत्रु नहीं है और यह कई स्थानों पर शार्क तथा मगरमच्छों के साथ विचरण करते देखी गई है। आहार की भिन्नता के कारण इनका आपस में कोई संघर्ष नहीं होता। मुख्यतया मनुष्य की नकारात्मक गतिविधियाँ इसके अस्तित्व के लिए खतरा बनी हुई हैं, जिनसे इसके प्राकृतिक आवास को नुकसान पहुँच रहा है, जलीय प्रदूषण तथा नावों से टकराहट इसके लिए अन्य खतरे हैं।

मैनाटी उच्च तापमान का अभ्यस्त जीव है तथा यह तापमान में परिवर्तन के प्रति संवेदनशील रहती है। 60 डिगरी फारेनहाइट या 20 डिगरी सेंटीग्रेड के नीचे तापमान पर इसे रहने में कठिनाई होती है। ठंड के कारण निमोनिया का शिकार हो सकती है और इसकी मृत्यु तक हो सकती है। इस

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

शांतशालीन जीव के संरक्षण की विशेष आवश्यकता है और इस दिशा में प्रयास हो भी रहे हैं।

कई चिड़ियाघरों में भी इसके प्रजनन व संरक्षण के प्रयास चल रहे हैं। इसके निवासस्थान की सुरक्षा, नीले-हरे शैवाल को हटाने और ईलग्रास को पुनः लगाने के प्रयास चल रहे हैं, जिस पर यह शाकाहारी जीव निर्भर रहता है।

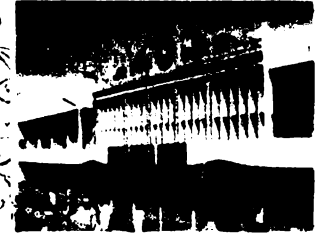
यदि कभी मैनाटी से सामना होता है तो इसे बाहरी भोजन न दें; क्योंकि इससे इसकी प्रकृतिप्रदत्त आहार खोजने की क्षमता प्रभावित हो सकती है। इनसान जब भी इनके विचरण के प्राकृतिक स्थानों पर जाएँ तो इन्हें दूर से निहारें व इनके संरक्षण के प्रयासों में अपना योगदान दें। □

भगवान मनु व शतरूपा के 2 पुत्र व 3 पुत्रियाँ हुईं। पुत्रों के नाम प्रियव्रत व उत्तानपाद तथा पुत्रियों के नाम आहुति, देवहूति व प्रसूति रखे गए। देवहूति प्रारंभ से ही धर्मनिष्ठ स्वभाव की थीं। देवर्षि नारद ने उनके लक्षण देखकर उनके लिए ऋषि आत्मा को वर के रूप में चयन करने का सुझाव मनु-शतरूपा को दिया। नारद ऋषि का सुझाव उन्हें जँचा तो वे देवहूति को लेकर कर्दम ऋषि के पास पहुँचे। कर्दम ऋषि घोर तपस्वी थे, उनका व्यक्तित्व अत्यंत आकर्षक था, परंतु वे प्रचंड तपस्वी का जीवन जीते थे सो उन्होंने देवहूति की परीक्षा लेने को सोचा। परीक्षा लेने के पीछे यह भाव था कि देवहूति राजवैभव में पली है क्या वह एक ऋषि आश्रम में तितिक्षा भरा जीवन व्यतीत कर पाएगी ?

परीक्षा लेने के उद्देश्य से उन्होंने 3 आसन रखे व उस पर मनु, शतरूपा व देवहूति को बैठने को कहा। 2 आसनों पर मनु व शतरूपा बैठ गए, पर देवहूति धर्मसंकट में पड़ गई। उन्हें लगा कि पति के सम्मुख उच्च आसन पर बैठना उचित नहीं है और इनका दिशा निर्देश ठुकराना भी उचित नहीं है। अतः वे एक हाथ आसन पर रखते हुए जमीन पर बैठ गई, ताकि दोनों मर्यादाओं का उल्लंघन न हो। कर्दम ऋषि को अपने व्यक्तित्व के अनुरूप संस्कारित वधू मिल गई। इनके 9 पुत्रियाँ व 1 पुत्र हुआ। 9 पुत्रियों में कला का विवाह मरीचि ऋषि के साथ, अनसूया का अत्रि ऋषि के साथ, अरुंधती का वसिष्ठ ऋषि के साथ, शक्ति का अथर्वण ऋषि के साथ, श्रद्धा का अंगिरा ऋषि के साथ, हविर्भू का पुलस्त्य ऋषि के साथ, क्रिया का हेतु ऋषि के साथ व ख्याति का भृगु ऋषि के साथ हुआ। कपिल मुनि तो महामुनि के रूप में प्रसिद्ध हुए।

इस प्रकार एक ही ऋषियुग ने भारतीय संस्कृति की सभी उल्लेखनीय ऋषि परंपराओं को जन्म दिया। ऐसा तभी संभव है, जब 2 ऋषि आत्माएँ, उच्च उद्देश्य के लिए गृहस्थ को एक तपोवन बनाने के उद्देश्य से मिलें तब जन्म लेने वाली संततियाँ श्रेष्ठतम व्यक्तित्वों को धारण करने वाली होती हैं।

आध्यात्मिक जैव-विविधता का प्रभाव



जीवनशैली की अस्त-व्यस्तता और वातावरण की विषाक्तता ने मनुष्य के स्वास्थ्य को बुरी तरह प्रभावित किया हुआ है। चाहे-अनचाहे सैकड़ों समस्याएँ-बीमारियाँ जीवन में इन्हीं दो कारणों की देन हैं। संतुलित जीवनचर्या और स्वस्थ-सात्त्विक वातावरण से शारीरिक और मानसिक स्तर पर सैकड़ों समस्याओं का समाधान सहज ही प्राप्त किया जा सकता है।

यद्यपि आधुनिक समाज इस दिशा में सजग और जाग्रत भी हो रहा है, किंतु उसकी सामर्थ्य और प्रयासों की दिशा को समुचित मार्गदर्शन की आवश्यकता प्रतीत होती है। जीवनशैली को सुधारने के नाम पर कहीं से भी सुनकर या देखकर आहार-विहार-योग आदि की कुछ भी प्रक्रियाओं को अपना लेने भर से बात नहीं बनने वाली है। इसके लिए एक अनुकूल वातावरण, स्वच्छ पर्यावरण और आदर्श यौगिक जीवनशैली का समन्वित उपाय ही कारगर हो सकता है।

उल्लेखनीय है कि हरिद्वार स्थित देव संस्कृति विश्वविद्यालय के नैसर्गिक और आध्यात्मिक वातावरण में उक्त सभी बातों का अनुपम संयोग है। इसका परिसर हिमालय के तराई क्षेत्र में माँ गंगा के किनारे सैकड़ों एकड़ भू-भाग में विस्तृत, जैव विविधता का उत्कृष्ट उदाहरण है। सात्त्विक जीवनचर्या, यौगिक वातावरण और तप-साधना-स्वाध्याय की प्रक्रियाओं से युक्त आध्यात्मिक जैव-विविधता यहाँ आने वालों को सहज उपलब्ध है। साधना, योगाभ्यास एवं स्वास्थ्य संवर्द्धन की दृष्टि

से ऐसे आदर्श वातावरण और परिवेश का वर्तमान समय में अत्यंत महत्त्व और उपयोगिता है।

समय की इस माँग को आधार बनाकर देव संस्कृति विश्वविद्यालय के योग विज्ञान एवं मानव चेतना विभाग के अंतर्गत एक महत्त्वपूर्ण शोध अध्ययन का कार्य संपन्न किया गया है।

यह शोधकार्य वर्ष—2020 में शोधार्थी अंजलि भारद्वाज द्वारा श्रद्धेय कुलाधिपति डॉ० प्रणव पण्ड्या जी के विशेष संरक्षण एवं डॉ० असीम कुलश्रेष्ठ के निर्देशन व डॉ० कामाख्या कुमार के सहनिर्देशन में पूरा किया गया है। इस विशिष्ट शोध अध्ययन का विषय है—‘यूटिलिटी एंड रेलेवेन्स ऑफ स्पीचुअल बायोडायवर्सिटी इन यौगिक एन्वायरनमेंट—अ डिसक्रिप्टिव स्टडी।’ सैद्धांतिक एवं विवेचनात्मक विधि पर आधृत इस अध्ययन को शोधार्थी द्वारा कुल 8 अध्यायों में विभाजित कर प्रस्तुत किया गया है।

शोध का पहला अध्याय—‘विषय प्रवेश’ है। इसके अंतर्गत अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्त्व को प्रस्तुत करते हुए योग की अवधारणा, उद्देश्य और महत्त्व का विवेचन किया गया है। इसके साथ ही इस शोध के उद्देश्य, सीमाओं और प्रयुक्त शोध प्रविधि को भी प्रस्तुत किया गया है।

शोधार्थी का मत है कि आजकल लोग योग, व्यायाम आदि का अभ्यास तो करते हैं, परंतु यौगिक वातावरण के अभाव में उन्हें उनके अभ्यास का लाभ नहीं मिल पाता है। अतः इस दिशा में प्रामाणिक

► ‘नारी सशक्तीकरण’ वर्ष ◄

तथ्यों के आधार पर लोगों में जागरूकता लाना आवश्यक है।

ऐसे ही आध्यात्मिक जैव-विविधता भी लोगों के मानसिक शांति एवं भावनात्मक स्थिरता तथा स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। समग्र स्वास्थ्य की प्राप्ति में आध्यात्मिक जैव-विविधता की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। एक स्वस्थ जीवनशैली के लिए उक्त दोनों की आवश्यकता है।

योग भारत की प्राचीन परंपराओं में संपूर्ण जीवन के रूपांतरण का एक विशिष्ट विज्ञान रहा है। इसकी प्रासंगिकता एवं उपादेयता हर देश-काल में असंदिग्ध है। योगाभ्यास का उद्देश्य केवल स्वास्थ्य लाभ ही नहीं है अपितु शरीर, मन और आत्मा के स्तर पर जीवन को संतुलित और विकसित बनाकर संपूर्णता प्रदान करना भी है। वर्तमान की विकृत जीवनशैली को सुधारने और उत्पन्न समस्याओं के समुचित समाधान में यौगिक जीवनशैली एक सर्वोत्तम उपाय है।

इस अध्ययन का उद्देश्य हमारे प्राचीन शास्त्रों में वर्णित यौगिक वातावरण एवं आध्यात्मिक जैव-विविधता के आयामों को वर्णित कर इसके आधार पर इनकी सामयिक महत्ता और अंतर्संबंधों को प्रकट करना है। साथ ही तथ्यात्मक रूप से यह भी प्रमाणित करना है कि यौगिक वातावरण और आध्यात्मिक जैव-विविधता का स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है और ऐसे परिवेश एवं जीवनशैली के निर्माण में कौन-कौन सी चुनौतियाँ सामने आती हैं।

इसके लिए शोधार्थी ने अपनी शोध-प्रक्रिया में भारत के प्राचीन शास्त्रों से आध्यात्मिक जैव-विविधता व यौगिक वातावरण की अवधारणाओं को ग्रहण कर वर्तमान संदर्भ में नए प्रारूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इस प्रारूप में लोगों में प्राकृतिक वातावरण के प्रति सजगता, यौगिक

वातावरण, जैव-विविधता का महत्त्व, स्वस्थ वातावरण की अवधारणा, स्वस्थ पारिस्थितिकी तंत्र और स्थिर प्राकृतिक वातावरण आदि पहलुओं को सम्मिलित किया है।

शोध का दूसरा अध्याय—‘साहित्यिक सर्वेक्षण’ है। इसके अंतर्गत वेद, उपनिषद्, पुराण, गीता व योगाचार्यों के साहित्य का अध्ययन कर शोध में उपयोगी तथ्यों को प्रस्तुत किया गया है। इसके साथ ही यौगिक जीवनशैली, वातावरण व जैव-विविधता से संबंधित विभिन्न शोधकार्यों की विवेचना करते हुए उनके विशिष्ट पहलुओं को उजागर किया गया है। साथ ही यह भी दर्साया गया है कि यह शोध-विषय किन-किन पहलुओं से सर्वथा नवीन, विशिष्ट और उपादेयी है।

शोध का तीसरा अध्याय—‘वातावरण और यौगिक वातावरण’ है। इसके प्रथम भाग में वातावरण की अवधारणा, आयाम और चुनौतियों का विवेचन किया गया है तथा दूसरे पक्ष में यौगिक वातावरण की परिभाषा, विविध आयाम एवं महत्त्व को प्रस्तुत किया गया है। वातावरण में हमारे जीवन को चलाने वाले आस-पास के सभी जैविक एवं प्राकृतिक घटक सम्मिलित हैं; जैसे हवा, पानी, मिट्टी, नमी, तापमान, प्रकाश, मौसम आदि। ये सभी हमारे जीवन को सकारात्मक या नकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं।

इसके साथ ही वातावरण में स्थान एवं समय विशेष के साथ-साथ सामाजिक, आर्थिक, भौतिक, जैविक व रासायनिक कारक भी जुड़े रहते हैं। ये सब मिलकर जीवन को गतिशील बनाए रखने वाले वातावरण का निर्माण करते हैं, लेकिन वर्तमान में वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, मृदा प्रदूषण और रासायनिक प्रदूषण के कारण संपूर्ण वातावरण दूषित है, जिसके फलस्वरूप स्वास्थ्य और जीवन से संबंधित समस्याओं में बेतहाशा बढ़ोत्तरी हो रही

► ‘नारी सशक्तीकरण’ वर्ष ◄

है। शुद्ध प्राकृतिक हवा, पानी, मिट्टी और भोजन की उपलब्धता वर्तमान की अनिवार्यता बन गई है।

ऐसे में प्राकृतिक एवं यौगिक जीवनशैली के प्रति उन्मुख होना स्वाभाविक है। यौगिक वातावरण का निर्माण प्राचीन ऋषियों की विरासत है। वर्तमान में ऐसे वातावरण की अत्यंत आवश्यकता है, जो जीवन तत्त्वों की संपूर्णता और समृद्धता से ओत-प्रोत हो। यौगिक वातावरण में मुख्यतया चार बातों का समावेश होता है—

(1) ऐसा प्राकृतिक स्थान, जिसकी सुंदरता मन को आकर्षित करे।

(2) प्राकृतिक स्थान ऐसा हो, जहाँ शांतिपूर्वक योगाभ्यास आदि कार्यों को किया जा सके अर्थात् अनावश्यक कोलाहल व अशांति न हो।

(3) शारीरिक रूप से सक्रियता एवं रचनात्मकता से संबंधित क्रियाकलाप हो।

(4) ऐसे वातावरण में जीवन-ऊर्जा का, जीवनीशक्ति का प्रवाह प्रबल होना चाहिए। इस तरह यौगिक वातावरण में शांति, सुंदरता, सात्विकता, ऊर्जा और स्वच्छता का समुचित समन्वय रहता है। इस अध्ययन में ऐसे वातावरण को विनिर्मित करने वाले मुख्य कारकों का विस्तृत विवेचन है।

ये कारक हैं—पर्वत, नदियाँ, झील, झरने, ताल, समुद्र, जंगल आदि। भौतिक वातावरण के लिए तथा मानसिक व आंतरिक वातावरण की अनुकूलता के लिए प्रकृति के साथ सामंजस्य, ऊर्जा एवं प्राणवायु की संपूर्णता, संवेदनशीलता, चिंतनशीलता, सकारात्मकता का वातावरण, सात्विक खान-पान आदि।

इन तत्त्वों से युक्त वातावरण शारीरिक, मानसिक और आत्मिक अर्थात् संपूर्ण व्यक्तित्व और जीवन पर सकारात्मक प्रभाव डालकर सर्वथा नई ऊर्जा, प्राण और जीवनतत्त्व का संचार करता है। योगाभ्यास, स्वास्थ्य-संरक्षण एवं चिकित्सा

की दृष्टि से भी ऐसे यौगिक वातावरण की अत्यधिक महत्ता और आवश्यकता है।

शोध का चौथा अध्याय 'जैव-विविधता और आध्यात्मिक जैव-विविधता' है। इसके अंतर्गत जैव-विविधता तथा इसके प्रमुख आयामों की विवेचना करते हुए आध्यात्मिक जैव-विविधता की अवधारणा, प्रमुख पहलू एवं महत्त्व को प्रस्तुत किया गया है। जैव-विविधता पर्यावरण निर्माण की मुख्य कड़ी है। इसमें सूक्ष्म जीव-जंतुओं, पशु-पक्षियों, पेड़-पौधों—सभी का सम्मिलित रूप मिलकर जीवन को गतिशील बनाए रखते हैं।

जैव-विविधता के 3 प्रमुख आयाम हैं—जेनेटिक, स्पेसिस और इकोसिस्टम। ये तीनों जैव-विविधता के महत्त्वपूर्ण घटक हैं, जिनमें पारस्परिक निर्भरता, संतुलन और स्थिरता से जीवनदायी वातावरण का निर्माण होता है। आध्यात्मिक जैव-विविधता भी इसी का एक विशिष्ट स्वरूप है।

आध्यात्मिक जैव-विविधता में यह विशेषता है कि इसमें प्रकृति के उन्हीं तत्त्वों को सम्मिलित किया जाता है, जिनका आध्यात्मिक महत्त्व होता है और जो मानव जीवन एवं उसके आंतरिक व्यक्तित्व पर सकारात्मक प्रभाव उत्पन्न करते हैं। प्राकृतिक सौंदर्य से युक्त स्थान, शांत-स्वच्छ वातावरण, गंगा जैसी पवित्र नदियों के तट, तीर्थस्थल जहाँ शोरगुल और प्रदूषण न हो, शांति से युक्त पहाड़ियाँ, औषधियुक्त पेड़-पौधे, पवित्र झील-झरने—ये सब आध्यात्मिक जैव-विविधता के अंतर्गत आते हैं। ऐसे वातावरण में यौगिक और आध्यात्मिक अभ्यास का शरीर और मन पर ज्यादा प्रभाव पड़ता है।

मन की शांति, शरीर, मन और आत्मा—तीनों में संतुलन, स्वास्थ्य और सामर्थ्य प्राप्त करने में आध्यात्मिक जैव-विविधता का वातावरण अत्यंत महत्त्वपूर्ण सहयोगी भूमिका निभाता है। अध्ययन में आध्यात्मिक जैव-विविधता के चार प्रमुख

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

आयामों की विवेचना है। ये चार आयाम हैं— आध्यात्मिक स्थिरता, आध्यात्मिक महत्त्व के पेड़-पौधे व वनस्पति, आध्यात्मिक परिवेश और स्वस्थ पारिस्थितिकी तंत्र।

इस तरह की विशेषताओं से युक्त वातावरण दो तरह से उपलब्ध होता है। प्रथम प्राकृतिक रूप से पहाड़, घने वन प्रदेश आदि में तथा द्वितीय, जहाँ मानवीय प्रयासों से किसी संस्थान, आश्रम, क्षेत्र आदि स्थानों पर इसे विनिर्मित किया जाता है। महत्त्व की दृष्टि से जहाँ सामान्य प्राकृतिक वातावरण केवल शरीर-स्वास्थ्य को लाभ पहुँचाता है तो वहीं आध्यात्मिक जैव-विविधता से युक्त वातावरण शारीरिक उत्कर्ष, मानसिक स्वास्थ्य और आध्यात्मिक विकास में सहायक बनकर संपूर्ण जीवन को नवीन ऊर्जा से भर देता है।

शोध का पाँचवाँ अध्याय है—**यौगिक वातावरण एवं आध्यात्मिक जैव-विविधता**। इसके अंतर्गत शोधार्थी ने एक ऐसा मॉडल प्रस्तुत किया है, जिसमें यौगिक वातावरण और आध्यात्मिक जैव-विविधता के महत्त्वपूर्ण आयामों का समुचित समावेश है। मॉडल में सरकार अथवा निजी संस्थानों द्वारा संरक्षित व सुरक्षित प्राकृतिक स्थान, वनक्षेत्र जहाँ स्वच्छ और स्वस्थ वातावरण हो ऐसे स्थान का वर्णन है।

ऐसे स्थान पर सात्विक आहार, ध्यान के लिए उपयुक्त स्थान व अन्य सकारात्मक चीजें मौजूद हों। ऐसे उपयुक्त वातावरण में आध्यात्मिक जैव-विविधता को भी विकसित किया गया हो अथवा प्राकृतिक रूप से उसकी उपलब्धता हो।

ऐसे योगाभ्यास के केंद्र प्राकृतिक स्थानों में खोजे भी जा सकते हैं अथवा उचित स्थान देखकर गाँव अथवा शहरी क्षेत्रों में बनाए भी जा सकते हैं। भाग-दौड़ से भरी जीवनचर्या में यदि ऐसे केंद्रों की व्यवस्था न हो पाए तो निजी आवास-क्षेत्र में ही फूल-फुलवारी, आध्यात्मिक चीजों से साज-सज्जा,

ध्यान केंद्र, स्वाध्याय केंद्र आदि की व्यवस्था कर कुछ हद तक लाभान्वित हुआ जा सकता है।

आध्यात्मिक जैव-विविधता का उत्कृष्ट उदाहरण देव संस्कृति विश्वविद्यालय परिसर में स्थित 'श्रीराम स्मृति उपवन' के रूप में देखा जा सकता है। इस उपवन में जो आध्यात्मिक घटक हैं, वे हैं— एक्यूपेशन पार्क, ध्यान केंद्र, औषधीय एवं आध्यात्मिक महत्त्व के पौधे, प्राकृतिक आहार केंद्र, पक्षियों के दाना-पानी एवं आवास के स्थान, यज्ञशाला, दिव्य संगीत व्यवस्था, झरने एवं फौवारे आदि।

इसके साथ ही इस उपवन में पूर्णतः यौगिक वातावरण उपलब्ध है। प्राकृतिक सुरम्य वातावरण, हिमालय से आती ताजी ठंडी हवा, वृक्ष-वनस्पति, फल-फूल बागानों से आच्छादित माँ गंगा की गोद में स्थित यह परिसर अत्यंत दिव्य एवं अनुपम है।

शोध का छठा अध्याय '**भारतीय दर्शन एवं शास्त्रों के संदर्भ में आध्यात्मिक जैव-विविधता से युक्त यौगिक वातावरण का महत्त्व है।**' इसके अंतर्गत पौधे और औषधियाँ, पशु-पक्षी और अन्य सजगता उत्पन्न करने वाले तत्वों की विवेचना की गई है।

भारतीय जीवन के प्राचीनतम सिद्धांतों में योग, साधना, तप व सामान्य जीवन—सभी स्तरों पर वृक्ष-वनस्पतियों, औषधियों से युक्त पेड़-पौधों का महत्त्व रहा है। आदिकाल से इनसान इनका सान्निध्य प्राप्त कर संपूर्ण जीवन में स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करते रहे हैं। प्रकृति, पर्यावरण और मनुष्य के जीवन की अटूट संबद्धता, प्राचीनकाल से चली आ रही हैं।

चिकित्सकीय एवं स्वास्थ्य संरक्षण के साथ-साथ धार्मिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से भी इन वृक्षों-पौधों का महत्त्व सदैव यथावत् बना हुआ है। वेद, शास्त्रों, पुराणों में इनकी महिमा विस्तार से कही गई है। आध्यात्मिक जैव-विविधता के निर्माण में महत्त्वपूर्ण स्थान रखने वाले आध्यात्मिक वृक्ष-वनस्पति हैं—

► **'नारी सशक्तीकरण' वर्ष** ◄

तुलसी, पीपल, बरगद, अशोक, पारिजात, चंदन, नीम, आम, बेल, देवदारु, आँवला, पलाश, कदंब आदि।

इसी तरह पौराणिक ग्रंथों में पशु-पक्षियों का भी आध्यात्मिक वातावरण के साथ घनिष्ठ संबंध और महत्त्व दर्साया गया है। इन प्राणियों में प्रमुख हैं—कबूतर, हंस, मोर, कौवा, चातक, तोता, गिद्ध, कोयल, पपीहा आदि पक्षी तथा गाय, बंदर, हाथी, घोड़ा, शेर, मछली, मगर, कछुआ, हिरन, कुत्ता, चूहा, खरगोश आदि जानवरों का उल्लेख है।

भारतीय जीवनपद्धति में प्रकृति-पर्यावरण को समृद्ध बनाए रखने वाले विज्ञान को विभिन्न धार्मिक-सांस्कृतिक मान्यताओं के रूप में लोक संस्कृति का अभिन्न अंग माना गया है। संस्कृति के संरक्षण और विकास की प्रक्रिया में पेड़-पौधे, प्राणी जगत, नदी-पर्वत आदि सभी सम्मिलित हैं। प्राचीनकाल से समाज में देवी-देवताओं, शक्तियों के प्रतीक रूप में इनकी पूजा-उपासना, संरक्षण-सान्निध्य की पुनीत परंपराएँ मौजूद रही हैं। यह मानव और प्रकृति के अंतर्संबंधों का दैवी और आध्यात्मिक स्वरूप है, जो धरती पर सहअस्तित्व को बनाए रखने का श्रेष्ठतम आदर्श प्रस्तुत करता है।

शोध का सातवाँ अध्याय 'चुनौतियाँ, संभावनाएँ एवं सुझाव' है। इसके अंतर्गत यौगिक वातावरण और आध्यात्मिक जैव-विविधता के लिए प्रस्तुत चुनौतियों, संभावनाओं तथा इस दिशा में किए जा सकने वाले सार्थक प्रयासों के संदर्भ में महत्त्वपूर्ण सुझावों का विवेचन किया गया है। शोधार्थी के मतानुसार सुरक्षा, प्रबंधन और विकास की दृष्टि से आध्यात्मिक जैव-विविधता के प्रति जनसमाज में जागरूकता उत्पन्न करना सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष है।

इसके साथ ही ऐसे वातावरण से संबंधित प्राचीन दिव्य परंपराओं का पोषण, प्रकृति-पर्यावरण के सभी पहलुओं को जीवनतुल्य महत्त्व एवं सम्मान देते हुए सतत परिष्कृत एवं समृद्ध बनाए रखने वाले प्रयास करना भी आवश्यक है। जागरूकता

का अभाव और भोगवादी दूषित चिंतन ने ही पर्यावरण को सर्वाधिक नुकसान पहुँचाया है। प्रदूषण, ग्लोबल वार्मिंग, प्राकृतिक आपदाओं जैसी भयावह चुनौतियों का प्रमुख कारण मानवीय चिंतन की विकृति और सजगता का अभाव ही है।

अतः वातावरण के प्रति दृष्टिकोण बदलने तथा प्राकृतिक जीवनशैली की ओर उन्मुख होने की दिशा में सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता है। मनुष्य का आदिकाल से प्रकृति और पर्यावरण के साथ सहसंबंध रहा है। इस संबंध की धुरी को कैसे मजबूत बनाया जा सकता है तथा मौजूदा समस्याओं और स्वास्थ्यजन्य चुनौतियों का समाधान आदर्श

इसे दुर्भाग्य ही कहना चाहिए कि आध्यात्मिकता का अवमूल्यन होते-होते वह बाजीगरी स्तर तक पहुँच गई है और सिद्धियों का तात्पर्य लोग किसी ऐसे ही अजूबे से समझने लगे हैं, जो कौतुक-कुतूहल उत्पन्न करता हो।

— परमपूज्य गुरुदेव

वातावरण और जीवनशैली द्वारा कैसे संभव है, इन प्रश्नों का समुचित उत्तर इस शोध अध्ययन में प्रस्तुत किया गया है।

शोध के अंतिम सोपान में शोध के निष्कर्ष, वर्तमान परिदृश्य में इसकी महत्ता एवं उपयोगिता की विवेचना की गई है। यौगिक वातावरण और आध्यात्मिक जैव-विविधता की अवधारणा में मनुष्य का स्वास्थ्य संरक्षण, चिकित्सा, जीवनमूल्यों का विकास, संस्कृति-समाज और राष्ट्र के समृद्धिकारक तत्त्वों का समावेश है।

अतः ऐसे आदर्श वातावरण की उपादेयता को ध्यान में रखते हुए देव संस्कृति विश्वविद्यालय परिसर स्थित 'श्रीराम स्मृति उपवन' की भाँति ही स्थान-स्थान पर इस तरह के मॉडल को स्थापित किया जाना चाहिए। □

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

त्यागी के कर्मों की दिशा होती है भिन्न



(श्रीमद्भगवद्गीता के मोक्ष संन्यास योग नामक अठारहवें अध्याय की छठी किस्त)

[इससे पूर्व की किस्त में श्रीमद्भगवद्गीता के अठारहवें अध्याय के पाँचवें श्लोक की व्याख्या प्रस्तुत की गई थी। इस श्लोक में भगवान कृष्ण, अर्जुन से कहते हैं कि यज्ञ, दान एवं तपरूपी कर्मों का त्याग नहीं करना चाहिए, प्रत्युत उनको तो करना ही चाहिए; क्योंकि यज्ञ, दान और तप—ये तीनों ही कर्म मनीषियों को पवित्र करने वाले होते हैं। यहाँ भगवान एक महत्त्वपूर्ण संदेश अर्जुन को दे रहे हैं। वे अर्जुन को त्यागने योग्य बातों को करने से पूर्व ये बता रहे हैं कि क्या नहीं त्यागना चाहिए। इसीलिए भगवान यहाँ मनीषी शब्द का प्रयोग करते हैं; क्योंकि मनीषी विचारशील एवं विवेकी पुरुष को बोलते हैं— जो ये जानता हो कि मात्र वो ही कर्म किए जाएँ, जो मनीषी को पवित्र बनाते हैं, साधक को पावन बनाते हैं।

इस श्लोक में भगवान दो प्रमुख बातें कहते हैं। पहली—यज्ञ, दान एवं तप, ये तीनों कर्म त्याज्य नहीं हैं, बल्कि इन्हें करना चाहिए। दूसरी—ये कर्म साधक को पवित्र बनाने वाले कर्म हैं; क्योंकि ये चित्तशुद्धि का आधार हैं। यदि चित्तभूमि निर्मल न हो तो प्रारब्ध कर्म के वशीभूत होकर आत्मा को तब तक शरीर धारण करना पड़ता है, जब तक कि चित्त निर्भार न हो जाए। वैसा करने के लिए उन कर्मों का संबल लेना अनिवार्य हो जाता है, जो हमें पवित्र बनाते हों। इसीलिए भगवान कहते हैं कि 'कार्यमेव तत्' उनको तो करना ही चाहिए, ताकि यदि कोई इन कर्मों का त्याग करके बैठा हो तो वो इन्हें निश्चित रूप से अपना ले और अवश्य करे।]

इसके उपरान्त भगवान कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि

एतान्यपि तु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा फलानि च ।
कर्तव्यानीति मे पार्थ, निश्चितं मतमुत्तमम् ॥6॥

शब्द विग्रह—एतानि, अपि, तु, कर्माणि, सङ्गम्, त्यक्त्वा, फलानि, च, कर्तव्यानि, इति, मे, पार्थ, निश्चितम्, मतम्, उत्तमम्।

शब्दार्थ—हे पार्थ! (पार्थ), इन यज्ञ, दान और तप रूप कर्मों को (एतानि), तथा (तु),

और (अन्यानि), भी (अपि), संपूर्ण कर्तव्य कर्मों को (कर्माणि), आसक्ति (सङ्गम्), और (च), फलों का (फलानि), त्याग करके (अवश्य) (त्यक्त्वा), करना चाहिए (कर्तव्यानि), यह (इति), मेरा (मे), निश्चय किया हुआ (निश्चितम्), उत्तम (उत्तमम्), मत है (मतम्)।

अर्थात् हे पार्थ! इन यज्ञ, दान और तप रूप कर्मों को तथा दूसरे अन्य कर्मों को आसक्ति और

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀
सितंबर, 2024 : अखण्ड ज्योति

फलों की इच्छा का त्याग करके करना चाहिए— यह मेरा निश्चित किया हुआ उत्तम मत है। अत्यंत गंभीर सूत्र है यह! भगवान कहते हैं कि चाहे हम इन सात्त्विक कर्मों को करें या अन्य किन्हीं भी कर्मों को—उनको करने का भाव निरासक्ति ही होना चाहिए, तभी वे हमें बंधनमुक्त कराने का आधार बनते हैं।

यहाँ श्रीभगवान कर्मों के फल के प्रति भी त्याग करने का संदेश देते हैं और उनको करने के प्रति भी अनासक्ति के भाव को अपनाने को कहते हैं।

वे कहते हैं कि—‘संगम च फलानि त्यक्त्वा’ अर्थात् आसक्ति और फलों की इच्छा का त्याग। यह बड़ा महत्त्वपूर्ण सूत्र है। साधक की आसक्ति न तो कर्मों में रहे और न उनके फलों में रहे। ऐसा करने पर साधक स्वतः ही पवित्र हो जाता है। भगवान ने गीता (5/10) में पहले ही कहा है—

**ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा करोति यः ।
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा ॥**

अर्थात् जो संपूर्ण कर्मों को परमात्मा में अर्पण करके और आसक्ति का त्याग करके कर्म करता है, वह जल से कमल के पत्ते की तरह पाप से लिप्त नहीं होता। ऐसा इसलिए; क्योंकि फलों की इच्छा तो कई बार छूट भी जाती है, परंतु कर्मों के साथ संगता का भाव कठिनाई से जाता है।

फलों की इच्छा का आधार लोभ व मोह हैं तो वहीं कर्म के साथ संगता का भाव अहंकार व

अविद्या से आता है। जैसे ही चेतना का जड़ के साथ संबंध छूटता है तो वैसे ही ये दोनों भाव भी विदा हो जाते हैं।

इसके बाद श्रीभगवान एक महत्त्वपूर्ण सूत्र देते हैं कि इन दोनों का त्याग करके मात्र कर्तव्य कर्मों को करना चाहिए। मुक्त होने के बाद भी संत कबीर ने जुलाहे का कर्तव्य कार्य नहीं त्यागा, संत रैदास जूता गाँठते रहे तो वहीं गाड़ीवान रैक्य अपना कार्य करते रहे।

जिसने कर्मों के साथ संग व फलेच्छा, दोनों का त्याग कर दिया—वह फिर मात्र कर्तव्य कर्म ही करता है और स्वार्थ हेतु कोई कार्य फिर उससे नहीं होता।

इसीलिए भगवान गीता में अन्यत्र (3/4) में कहते हैं कि

**न कर्मणामनारम्भानैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते ।
न च सन्न्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति ॥**

अर्थात् मनुष्य न तो कर्मों का आरंभ किए बिना निष्कर्मता का अनुभव करता है और न कर्मों के त्याग मात्र से सिद्धि को ही प्राप्त होता है। कहने का अर्थ स्पष्ट है कि त्यागी के लिए कर्मों की दिशा बदल जाती है। वो फिर अपने लिए नहीं, वरन परोपकार के लिए, कर्तव्य कर्मों को करने के लिए, परमात्मा के लिए जीवन अर्पित करने के लिए कर्मों को करता है।

□

हम लेखक नहीं हैं। हमारे लिखे शब्दों में से आग निकलती है। विचारों की आग, भावनाओं की क्रांति की आग निकलती है। आज जनता भी प्यासी, हम भी प्यासे हैं— हमारी विचारधारा ही आग है। हम आग उगलते हैं। हमारी लेखनी में से निकलती है आग, हमारी आँखों में से निकलती है आग। हमारे विचारों की आग, भावनाओं की आग, संवेदनाओं की आग को आप घर-घर पहुँचाइए।

—परमपूज्य गुरुदेव

गणमान्यों के आगमन से धन्य हुआ विश्वविद्यालय



पूज्य गुरुदेव प्रदत्त समग्र शिक्षण प्रदान करने की पद्धति को अपनाने के लिए सुविख्यात देव संस्कृति विश्वविद्यालय वैश्विक स्तर पर जिज्ञासा का केंद्र बना हुआ है और यही कारण है कि यहाँ समय-समय पर गणमान्यों का आगमन होता रहता है। विशिष्ट अभ्यागतों के आगमन के क्रम में विगत दिनों विवेकानंद योग विश्वविद्यालय लॉस एंजिल्स, कैलिफोर्निया के अध्यक्ष डॉ० श्री एन० श्रीनाथ का आगमन हुआ। प्रतिकुलपति जी से भेंट के साथ भविष्य में आपसी सहयोग पर भी उनसे चर्चा हुई।

विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय और इक्फाई विश्वविद्यालय, देहरादून के मध्य हुए अनुबंध के अंतर्गत 5 यूके डिजाइन पेटेंट और कॉपीराइट की उपलब्धि हुई, जिनमें नवीनतम आईपीआर में—एमएल/एआई—आधारित कार्डियक मॉनिटर, नेटवर्क सुरक्षा हब, स्मार्ट शहरों के लिए 5जी का उपयोग करने वाले स्मार्ट ड्रोन, एआई-संचालित सटीक कृषि प्रणाली, जेनरेटिव एआई में रचनात्मकता के लिए डेटा प्रोसेसिंग डिवाइस, जलवायु-परिवर्तन व्यवहार की भविष्यवाणी के लिए एमएल मॉडल और डेटासेट शामिल हैं।

इंडोनेशिया के बाली में स्थित हिंदू नेगेरी विश्वविद्यालय और देव संस्कृति विश्वविद्यालय ने पूर्व में हुए अनुबंध की समयावधि को आगे बढ़ाया। प्रतिकुलपति जी एवं इंडोनेशिया से आए कुलाधिपति के नेतृत्व वाले दल की उपस्थिति में यह विशेष क्रम संपन्न हुआ। यह साझेदारी इंडोनेशिया और भारत के बीच शैक्षणिक आदान-प्रदान, संयुक्त

अनुसंधान पहल और सांस्कृतिक संबंधों को विकसित कर रही है।

इसी के साथ ही शैक्षणिक और सांस्कृतिक परिदृश्य को समृद्ध करने की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम में रीगा, लातविया में कला अकादमी ऑफ लातविया और देव संस्कृति विश्वविद्यालय के मध्य अनुबंध पर हस्ताक्षर किए गए। प्रतिकुलपति जी और कला अकादमी के कुलपति डॉ० जेरिन्स द्वारा शिक्षा, अनुसंधान और सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देने हेतु सहमति जताई गई है।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रुड़की—इन दो अग्रणी संस्थानों ने शिक्षा, अनुसंधान और सामुदायिक सेवा के क्षेत्र में गतिशील सहयोग के लिए मंच तैयार करते हुए एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए हैं। प्रतिकुलपति जी और आईआईटी रुड़की के निदेशक प्रो० कमल किशोर पंत जी ने इसे अध्यात्म एवं विज्ञान का एक अनूठा शक्तिशाली गठबंधन बताया, जो अकादमिक उत्कृष्टता और नवीन अनुसंधान को बढ़ावा देगा।

विल्नियस विश्वविद्यालय के प्रो० मिंदोगस, प्रो० गिना ने अपने 3 दिवसीय प्रवास में बाल्टिक संस्कृति और अध्ययन केंद्र सहित परिसर में स्वावलंबन केंद्र आदि सभी प्रमुख केंद्रों का बड़ी जिज्ञासा और उत्साह के साथ अध्ययन किया। उनके आगमन पर लिथुआनियाई भाषा और बहुभाषावाद पर एक विशेष कार्यक्रम आयोजित किया गया। प्रतिकुलपति जी ने इस अवसर पर

अतिथियों का स्वागत एवं लिथुआनियाई भाषा की शिक्षिका इवा की सेवाओं की सराहना करते हुए उन्हें धन्यवाद दिया।

अग्नि अखाड़े के प्रमुख स्वामी संपूर्णानंद जी भी देव संस्कृति विश्वविद्यालय पधारे। प्रतिकुलपति जी द्वारा स्वागत के साथ धर्म, अध्यात्म, समाज और राष्ट्र के अनेक विषयों पर उनसे चर्चा हुई। स्वामी संपूर्णानंद जी ने प्रज्ञेश्वर महादेव मंदिर में विशेष पूजन क्रम संपन्न किया।

विगत दिनों अमेरिका के स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क कॉलेज ऑफ एनवायरनमेंटल साइंस एंड फॉरेस्ट्री एवं देव संस्कृति विश्वविद्यालय के मध्य एक अनुबंध हुआ। इस सहयोग की देख-रेख प्रतिकुलपति जी और एसयूएनवाई-ईएसएफ के श्री थॉमस कार्टर और डॉ० दर्शिनी रूपनारायण द्वारा की जाएगी। यह ऐतिहासिक समझौता हमारे अंतरराष्ट्रीयकरण प्रयासों में एक महत्त्वपूर्ण कदम है।

देव संस्कृति कैरियर मार्गदर्शन केंद्र ने अपनी यात्रा का एक वर्ष पूर्ण किया। इस अवसर पर प्रतिकुलपति जी ने विद्यार्थियों को संबोधित करते हुए कैरियर विकास पर अपने ज्ञान को साझा किया। विगत वर्ष संस्कृति कैरियर मार्गदर्शन केंद्र ने 5 कार्यशालाएँ, 11 कैरियर वार्त्ताएँ और लगभग 250 कैरियर परामर्श सत्र आयोजित किए। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों में व्यावसायिकता प्रबंधन और संगठनात्मक कौशल विकसित करने के लिए इंटरनशिप का अवसर प्रदान किया गया। समारोह का समापन प्रमाणपत्र वितरण के साथ किया गया।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय में उत्तराखंड पर्यटन और ग्रामीण स्थिरता के लिए उद्यमशीलता के अवसर तलाशना विषय पर एक दिवसीय सेमिनार

का आयोजन किया गया। पर्यटन और संस्थागत नवाचार परामर्श विभाग द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित इस सेमिनार में गुजरात टेक्नोलॉजिकल यूनिवर्सिटी के ग्रुप सीईओ डॉ० तुषार पांचाल ने विशिष्ट व्याख्यान दिया।

इस अवसर पर पर्यावरण-अनुकूल प्रथाओं और सामुदायिक भागीदारी पर जोर देते हुए ग्रामीण क्षेत्रों में निवेश आकर्षित करने और रोजगार के अवसर पैदा करने के लिए नवीन व्यवसाय मॉडल की रूपरेखा तैयार की गई। इसी के साथ स्वावलंबन पर दो दिवसीय राष्ट्रीय कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला में देश के विभिन्न राज्यों से आए लगभग 250 विषय विशेषज्ञ, शिक्षक, ग्रामीण परिजन, शोधार्थी सम्मिलित हुए।

परमवंदनीया माताजी एवं अखंड दीपक जन्म शताब्दी के परिप्रेक्ष्य में हर खाली हाथ को काम देने के उद्देश्य से ग्रामीण स्वावलंबन विषय पर राष्ट्रीय कार्यशाला का आयोजन भी किया गया। प्रतिभागियों द्वारा क्षेत्रों में किए गए स्वावलंबन के कार्यों में आ रही कठिनाइयों के निराकरण पर आधारित संबोधन एवं चर्चा की गई।

अभ्युदय 2024 का आयोजन देव संस्कृति विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों की सकारात्मक, सृजनात्मक एवं रचनात्मकता की अभिव्यक्ति द्वारा किया गया। 2023-24 शैक्षणिक वर्ष के दौरान लगभग 200 सकारात्मक गतिविधियों एवं आयोजनों की प्रस्तुति की गई। इस अवसर पर उपस्थित प्रतिकुलपति, कुलसचिव, संकायाध्यक्ष समेत आचार्यगणों ने विद्यार्थियों के पुरुषार्थ की सराहना की।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय में इक्वाडोर के राजदूत माननीय श्री फर्नांडो बुचेली का आगमन एवं प्रतिकुलपति जी द्वारा भव्य स्वागत किया गया।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

इस अवसर पर आयुर्वेद विषय पर दो दिवसीय अंतरराष्ट्रीय कार्यशाला भी संपन्न हुई। समापन सत्र में डिवाइन वैल्यूज स्कूल, इक्वाडोर के सम्मानित अतिथियों को विदाई दी गई। इसी क्रम में घाना उच्चायोग के प्रथम सचिव श्री कॉनराड नाना भी देव संस्कृति विश्वविद्यालय पधारे।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय और सरदार पटेल विश्वविद्यालय, बालाघाट एक महत्त्वपूर्ण समझौता ज्ञापन में एक साथ आगे आए। सरदार पटेल विश्वविद्यालय के कुलाधिपति श्री दिवाकर सिंह और देव संस्कृति विश्वविद्यालय के प्रतिकुलपति जी के बीच वैज्ञानिक, तकनीकी और शैक्षणिक सहयोग को बढ़ावा देने के लिए एक अनुबंध पर हस्ताक्षर हुए।

अकाल तख्त श्री दमदमा साहिब के जत्थेदार श्रद्धेय ज्ञानी हरप्रीत सिंह जी का भी आगमन विश्वविद्यालय परिसर में हुआ। प्रतिकुलपति जी ने ससम्मान उनका स्वागत किया व एक गहन आध्यात्मिक संवाद भी किया। विश्वविद्यालय परिसर के आध्यात्मिक एवं शांत वातावरण का ज्ञानी हरप्रीत सिंह जी ने परिभ्रमण किया एवं यहाँ की शैक्षणिक गतिविधियों को भी जाना।

19 से 22 अप्रैल को भारत सरकार के युवा कार्यक्रम एवं खेल मंत्रालय ने राष्ट्रीय सेवा योजना

के क्षेत्रीय निदेशालय के सहयोग से शहीद दिवस के अवसर पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय में एक उल्लेखनीय कार्यक्रम का आयोजन किया।

इस कार्यक्रम का उद्देश्य स्वच्छता और मतदाता जागरूकता को बढ़ावा देना था। इस कार्यक्रम के अंतर्गत घर-घर जागरूकता रैली, प्रतियोगिताएँ और स्वच्छता अभियान चलाया गया। समापन अवसर पर प्रतिकुलपति जी ने प्रत्येक विद्यार्थी के प्रयासों की सराहना की।

छह मासीय वियतनामी भाषा प्रशिक्षण कार्यक्रम का भी विगत दिनों समापन हुआ। प्रतिभाशाली प्रशिक्षक सुश्री फुओंग थाओ ट्रान के मार्गदर्शन में विद्यार्थियों ने वियतनामी भाषा की सुंदरता एवं गहराई को जाना। प्रतिकुलपति जी ने समापन समारोह में विद्यार्थियों को प्रमाणपत्र वितरित किया।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय वर्तमान में एक ऐसा शिक्षण संस्थान बन चुका है, जिसमें शिक्षा प्राप्त करना आज अनेकों विद्यार्थियों का स्वप्न है। विश्वविद्यालय ने विभिन्न क्षेत्रों में अपनी पकड़ मजबूत की है और विद्यार्थियों के बेहतर भविष्य के लिए नए और आधुनिक मंच को प्रदान किया है। मूल्यपरक शिक्षा एवं विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास इसका प्रमुख लक्ष्य है।

अखण्ड ज्योति पत्रिका हेतु बैंक खातों का विवरण

जमा रसीद की प्रति एवं विवरण ई-मेल, पत्र द्वारा भेजें; अन्यथा राशि का समायोजन नहीं हो पाएगा।

Beneficiary –	Akhand Jyoti Sansthan	I.F.S. Code	Account No.
S.B.I.	Ghiya Mandi Mathura	SBIN0031010	51034880021
P.N.B.	Chowki Bagh Bahadur, Mathura	PUNB-0183800	1838002102224070
I.O.B.	Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura	IOBA0001441	144102000000006

विदेशी धन बैंक में सीधे जमा न करें, ड्राफ्ट द्वारा भेजें।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

उपासना का आधार



परमवंदनीया माताजी के व्याख्यानों की यह विशिष्टता है कि वे न केवल साधना-पथ के पथिकों को जीवन जीने का मर्म बताती हैं, वरन यह पथ उनके लिए भी प्रशस्त करती हैं, जो जीवन की साधारणताओं में उलझे हुए हैं। अपने इस विशिष्ट उद्बोधन में परमवंदनीया माताजी सभी साधकों के लिए उपासना का आधार स्पष्ट करते हुए कहती हैं कि मनुष्य के भीतर शक्तियों के असीम भंडार सुरक्षित हैं, परंतु वे उसी को हस्तगत हो पाते हैं, जो अपने अहंकार को विलगना जानता है। जो स्वयं को अभिमान व अहंकार से रहित कर पाता है एवं जिसके जीवन में पवित्रता का समावेश हो पाता है, वही उन शक्तियों को प्राप्त करने की सामर्थ्य विकसित कर पाता है। परमवंदनीया माताजी कहती हैं कि हर साधक को इसी पथ को अपनाना चाहिए एवं इसे उपासना का वास्तविक आधार समझना चाहिए। आइए हृदयगम करते हैं उनकी अमृतवाणी को.....।

अबोध बच्चे की तरह उपासना

एकलव्य ने केवल एक का—द्रोणाचार्य का पल्ला पकड़ा था। द्रोणाचार्य की मिट्टी की एक मूर्ति बना करके, एक आसन पर बैठा दी थी और उसी से वह अर्जुन से ज्यादा धनुर्विद्या सीख गया था। अर्जुन से ज्यादा धनुर्विद्या उसके अंदर आ गई। मुझे आपसे एक ही निवेदन करना है कि आप 9 दिन के लिए आए हैं, यह लड़कियाँ आई हैं, तो आप मन लगा करके एक अबोध बच्चे के तरीके से उपासना कीजिए।

आप मान करके चलिए कि हम माँ की गोद में बैठे हैं। बच्चा जब छोटा होता है, तो माँ की गोद के अलावा उसको और कोई याद नहीं होता और कोई दूसरा गोद में ले ले, तो रोने लगेगा। अगर माँ

गोद में ले ले, तो प्रसन्न हो जाएगा; क्योंकि माँ उसको पालती है, पोषण देती है। आप तो वही खाइए, जो माँ दे।

इसी वातावरण में आप घुलिये, रहिए; ताकि आप और परिपक्व होते हुए चले जाएँ। आप बाहर जाएँगे, घूमने जाएँगे, तो आपका ध्यान बँटेगा; क्योंकि इस वातावरण से आप अलग हो गए। इस वातावरण से आप अलग हो गए हैं, तो जहाँ कहीं भी आप जाएँगे, बाहर का जो वातावरण है, वह सारा-का-सारा आपको प्रभावित करता हुआ चला जाएगा। कहीं आप मरघट में कभी चले जाइए, तो आपके ऊपर थोड़ी देर में वैराग्य छा जाएगा; जबकि आपने वहाँ कोई चिंता नहीं देखी है; फिर भी वैराग्य छा जाएगा। जुआरियों में आप बैठिए, तो आप खेल

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

53

कबीर ने एक और दोहा कहा है और यह कहा है कि भक्त का हृदय कैसा होना चाहिए? निर्मल और पवित्र होना चाहिए। जब तक उसका हृदय पवित्र नहीं है, निर्मल नहीं है, तो भगवान क्यों मिलेगा? उन्होंने कहा—

कबीरा मन निर्मल भया जैसे गंगा नीर।

पीछे पीछे हरि फिरे कहत कबीर कबीर॥

उन्होंने कहा कि कबीर-कबीर कहता हुआ पीछे-पीछे भगवान फिरता है, उसकी पीठ सहलाता है। बेटे! इसी तरीके से गुरुजी के बारे में भी यही बात है कि उनके दाएँ-बाएँ, आगे-पीछे हर समय गायत्री माता और उनके गुरु उनके साथ-साथ रहते थे।

सोने में, उठने में हर समय उनके साथ रहते थे। उनका ऐसा कहना था कि मुझे ऐसा लगता है कि मेरे गुरु एक तरफ और मेरी गायत्री माता एक तरफ सोती हैं। एक तरफ मेरे गुरु सोते हैं और बीच में मैं सोता हूँ। ऐसा अनुभव होता है। हमें लगा कि हाँ ऐसा ही होता है। वास्तव में होता ही होगा, जरूर होता होगा; क्योंकि वे उस रंग में रँग गए थे।

जन-जन की गायत्री

जब व्यक्ति रँग जाता है, तो उधर ही सोचेगा, उधर ही विचार करेगा और उन्होंने उधर को ही विचार किया। गायत्री को जन-जन की गायत्री माता बना दिया।

उन्होंने गायत्री माता को सारे विश्व में फैला दिया। हिंदुस्तान में ही नहीं, सारे विश्व में गायत्री माता फैलती हुई चली जा रही हैं। क्यों फैलती हुई चली जा रही हैं? क्योंकि उन्होंने उनके ही निमित्त जिया।

उनके ही निमित्त उन्होंने कार्य किए तथा पीड़ा और पतन को उन्होंने अपनी छाती से लगाया। उसके निवारण के लिए सारी जिंदगी प्रयास करते रहे और उसी की खोज में लगे रहे कि किस तरीके

से पीड़ा और पतन का निवारण हो और कोई पीड़ा-पतन के निवारण के लिए निकलता है क्या? नहीं, वह नहीं निकलता।

उन्होंने हजारों कष्ट उठाए। हजारों कठिनाइयाँ झेलीं; लेकिन झेलते हुए भी उन्होंने उफ तक नहीं किया। यह नहीं कहा कि हमको अमुक कठिनाइयाँ हैं, अमुक दिक्कत है; क्योंकि जिस किसी के कष्ट और कठिनाइयों को अपने ऊपर लिया, तो बदले में आखिर कुछ तो चुकाना ही पड़ेगा।

कर्ज लिया है, तो या तो बेटा चुकाए, नहीं तो पिता चुकाए। कोई तो चुकाएगा ही। जब उनकी पीड़ा में, दुःख-कष्ट में शामिल हो गए और उनके निवारण के लिए कुछ करेंगे, तो कुछ तो चुकाना पड़ेगा, कुछ तो करना पड़ेगा। उसके निवारण के लिए यदि किया है, तो अपने ऊपर उठाना भी पड़ेगा।

हमारा फर्ज और कर्त्तव्य

कई बार उन्होंने ऐसे कष्टसाध्य कष्ट उठाए, जिनका वर्णन मैं आपके सामने नहीं कर रही हूँ और न कोई मैं यह एहसान बता रही हूँ कि उन्होंने आप लोगों के लिए किया। आपको भी मिशन के लिए कुछ करना चाहिए। यह आपका फर्ज और कर्त्तव्य है।

आपको मिशन के कार्यों में सहयोग करना चाहिए। आपको नारी जागरण का काम करना चाहिए। आपको झोला पुस्तकालय लेकर के आगे निकलना चाहिए और जहाँ-जहाँ अश्वमेध यज्ञ हो रहे हैं, अश्वमेध में भाग लीजिए, उसको सफल बनाने के लिए, उसमें जो भी कुछ योगदान हो सकता हो, उसमें योगदान देना चाहिए।

ये तो आपके फर्ज और कर्त्तव्य हैं, इन बातों को मैं क्यों कहूँ? मैं क्यों कहने लगी, मैं तो एक ही बात कह रही हूँ कि जो भी आपके कष्ट और कठिनाइयाँ होंगे, उनके निवारण के लिए जो भी

► **‘नारी सशक्तीकरण’ वर्ष** ◄

कुछ कर सकते होंगे, जितना भी कर सकते होंगे, आप सही मानना जरूर करेंगे और आपको अनुभव भी होगा। आप तो इस वातावरण में रहिए।

बेटे! अभी मैं वातावरण का महत्त्व बता रही थी कि जहाँ कहीं भी आप देखिए, जैसे वलसाड़ में चीकू ज्यादा होता है और जगह होता तो होगा, पर ऐसे ही होता होगा। वहाँ की जलवायु, वहाँ का वातावरण उसके अनुकूल है और संतरा नागपुर में ही होगा। केला दूसरी जगह ही होगा। अमरूद इलाहाबाद का ही होगा। हमने आपके लिए वातावरण बनाया है, जिसमें रह करके आप यहाँ से संतोष, शांति और शक्ति लेकर के जाइए।

अपने को बदलिए

आप यहाँ से प्रसन्नता लेकर के जाइए, आप अपने को यहाँ से बदल करके जाइए। आप तो बदलना ही नहीं चाहते, तो फिर बताइए कि आप किस तरीके से पाएँगे? अपने को बदलिए। जो भी आपके दुर्गुण हैं, जो भी आपके अंदर बुराइयाँ हैं, उन बुराइयों का निष्कासन कीजिए।

आपको दो कागज मिलेंगे। एक में जो भूलें आपसे जाने या अनजाने में हो गई हैं, उन भूलों को लिखना। दूसरे में जो भी आपकी कष्ट-कठिनाइयाँ हैं, उनको लिखना। हम उन्हें पढ़ेंगे और जो भी कुछ आपकी मदद कर सकते होंगे, हम वह मदद करेंगे। कितना होगा, हमें नहीं मालूम है। आपके हिस्से में कितना आएगा? जितना आपके हिस्से में आ जाएगा, उतना आपका हो जाएगा; पर आप अपनी मनोकामनाओं को यहाँ निकाल दें।

इन 9 दिनों के लिए तो विशेषतौर से निकाल दें। फिर आप यहाँ से, बाउंड्री से बाहर जाएँ। फिर आपकी इच्छा है। हम तो यही कहेंगे कि हमेशा के लिए ही अपनी चिंता, जिसमें आप घुलते जा रहे हैं, जो आपके ऊपर टेंशन है, न मालूम काहे का टेंशन

है, उसे यहीं छोड़कर जाइए। सारे हिंदुस्तान का भार इन्हीं के ऊपर है क्या? सारे टेंशन को आप यहाँ छोड़ करके जाइए, चाहे आप में से कोई भी हो।

बेटियो! आपको भी बहुत मुकाबला करना पड़ेगा। नारी में बड़ी शक्ति है, उस शक्ति का क्या कहना? नर के अंदर इतनी शक्ति नहीं होती है, जितनी महिला के अंदर शक्ति होती है। जो आँकड़े पाए गए हैं, उनमें जीवनीशक्ति महिलाओं में ज्यादा

पतझड़ बोला—“इतना भी प्रसन्न होने की आवश्यकता क्या है वसंत। जानते नहीं, मैं तुम्हारे पीछे ही खड़ा हूँ।”

वसंत बोला—“जानता हूँ पतझड़। तुम मेरा नाश कर दोगे, पर तुम यह नहीं जानते कि मैं दोबारा फिर आऊँगा। तब मेरा स्वागत नई कोपलें, नए पल्लव, नए पुष्प कर रहे होंगे और तब मैं और भी मनोवेग से संसार का सौंदर्य बढ़ा रहा होऊँगा।”

पाई गई; जबकि महिला कष्ट उठाती है, बच्चे होते हैं, तो मरती नहीं है; वरन उसकी सब गति हो जाती है। कितना कष्ट उठाती है, बच्चे को पालती है, घरवालों की, सबकी सुनती है, सास की सुनती है, ननद की सुनती है।

पति जो है, सो बेताज का बादशाह है, वह आया, तो एक बंदा उठाता है, एक रखता है, क्या

कहना है, वह तो बादशाह है न? इतनी सहिष्णुता नारी के अंदर होती है, दयालुता भी नारी के अंदर होती है, ममत्व भी नारी के अंदर होता है।

नारी के दो रूप

दो स्वरूप नारी के होते हैं। एक होता है—उसका ममता लिए हुए, जो दोष और दुर्गुण हैं, उन पर परदा डालती रहती है। हम अपना आपा क्यों बिगाड़ें, हम क्यों बुरे बनें? यह बुरा है, तो इसका मतलब यह थोड़े है कि हम भी बुरे बन जाएँ। हमको बुरा नहीं होना चाहिए। वह बेचारी उसको सारी जिंदगी खेती हुई चली जाती है। यह उसका त्याग है। यह उसकी ममता है।

एक स्वरूप है—उसका पत्नी का, जो कदम-से-कदम मिला करके चलती है। जैसे आप हमको ही देख लीजिए, हम दोनों एक और एक ग्यारह बन कर रहे और अभी भी उनकी शक्ति विद्यमान है।

इसलिए एकाकी होते हुए भी हम इतनी लंबी छलाँग मारने की कोशिश करते हैं कि हम मिशन को कहाँ-से-कहाँ ले जाएँगे? क्योंकि हम मिशन के लिए समर्पित हैं, उनके लिए समर्पित हैं, जो हमसे कह रहे थे कि हम इन लाखों बच्चों को तुम्हारे भरोसे छोड़े जा रहे हैं। भावुक होकर तुम कोई ऐसा कदम नहीं उठाओगी, जिससे यह बच्चे बिलखते रह जाएँ। मैंने वही बात अपने पल्ले में बाँध ली। मैंने कहा—“नहीं! जो आपने कह दिया है, वह मेरे लिए ब्रह्मवाक्य है।”

मैंने भगवान को तो नहीं देखा है, लेकिन एक भगवान को मैंने जरूर देखा है। विश्वमानव के रूप में भगवान को मैंने देखा है। वह भगवान तो बुलाने पर आता भी नहीं है, पर यह भगवान तो हमें आशीर्वाद भी देता है। यह भगवान हमें ऊँचा भी उठाता है। सब कुछ करता है और इस भगवान के लिए हम जो भी कुछ करेंगे, वह भी कम है।

हम आगे निरंतर बढ़ते हुए चले जा रहे हैं। कहाँ-कहाँ अश्वमेध होते हुए चले जा रहे हैं; जबकि शरीर इतना गवारा नहीं करता है और बुढ़ापा भी आ गया है, पर मैं उस बुढ़ापे को नहीं मानती हूँ जो शरीर का बुढ़ापा है। मन की हिम्मत के सहारे अभी मैं कहाँ-से-कहाँ पहुँचती हुई चली जा रही हूँ। मेरे घुटने तो काम नहीं करते हैं, अब थोड़ा कम करते हैं, बाकी का शरीर मेरा ठीक है, बाकी शरीर में कोई दिक्कत नहीं है। घुटने में थोड़ी-सी परेशानी है।

बुढ़ापे में कुछ-न-कुछ तो होता ही है, पर इतने पर भी हिम्मत रखते हैं। कहाँ-से-कहाँ लंदन में अश्वमेध होगा, वहाँ जाऊँगी; अमेरिका में होगा, वहाँ जाऊँगी; जबकि 20 घंटे तो हवाई जहाज में बैठे रहना पड़ेगा। बाबा हवाई जहाज में बैठना अलग है और तखत पर बैठना अलग बात है। तखत पर बैठी रहती हूँ, बीच-बीच में मुझे नहीं मालूम पड़ता कि कहाँ बैठी हूँ।

लक्ष्य को देखें

मैं तो अपने लक्ष्य को देखती हूँ, शरीर को नहीं देखती हूँ। फिर भी वहाँ के लिए हाँ कर दिया, जहाँ-जहाँ अश्वमेध हो रहे हैं और मैं सब जगह पहुँच रही हूँ। एकोएक जगह पहुँचूँगी। जहाँ भी अश्वमेध होंगे, मैं सब जगह पहुँचूँगी। शरीर बिलकुल ही गवाही न दे, तो मैं कहती नहीं हूँ या कोई परिस्थितियाँ ऐसी आ जाएँ, कि मैं न जा पाऊँ, तो बात अलग है, अन्यथा मैं जाऊँगी।

माताजी! आप यह क्या कह रही हैं? बेटे! मैं हिम्मत और हौसले की बात कह रही हूँ। आप लोगों को हिम्मत रखनी चाहिए। अपने घर में पवित्रता रखना, अपने घर में बच्चों को संस्कार देना आपका ही काम है, आपके पति संस्कार नहीं देंगे। न उन पर संस्कार है, न वह दे सकते हैं। संस्कार नारी में होते हैं, वही अपने बच्चों को

संस्कार, अपने घरवालों को संस्कार, अपने पति को संस्कार दे सकती है।

अभी मैंने श्रद्धानंद का उदाहरण सुनाया था। पत्नी ने ही उन्हें स्वामी श्रद्धानंद बनाया। संत तुलसीदास को किसने बनाया था? उनकी पत्नी ने ही तो बनाया था। यदि पत्नी यह नहीं कहती कि तू इतना कामुक है कि यदि जितना मेरे लिए तेरा ध्यान जाता है, कहीं उस भगवान की तरफ जाए, तो तेरा कल्याण हो जाए। उसकी यह बात तुलसीदास को लग गई और वह संत तुलसीदास हो गए और ऐसे हो गए कि भगवान उनको तिलक लगाने के लिए आए। उन्होंने कहा—

चित्रकूट के घाट पर भई संतन की भीर।

तुलसीदास चंदन घिसें तिलक देत रघुवीर॥

घर सँवारें, परिवार बनाएँ

ऐसा जीवन हो सकता है? बिल्कुल हो सकता है। तुम तो सारे घर की कायापलट कर दो, सारे घर को ऐसा बना डालो कि जैसे एक तपोवन होता है। हमारा घर एक तपोवन है, उस तपोवन में रहने वाले प्रत्येक प्राणी जो भी हैं, वह संत प्रकृति के होने चाहिए। उनको कैसे भी बनाओ, अपनी सेवा से बनाओ, अपने मीठे शब्दों से बनाओ। किसी तरीके से बनाओ, आप खुद कष्ट सहो; लेकिन अपने घर को बढ़िया क्वालिटी का बना करके रखो।

अपने बच्चों में कोई गलत आदत मत पड़ने दो। अपने पति को भी सँभालकर रखो। जैसा कुछ है, उसके दुर्गुणों को धोने की कोशिश तो करो। ऐसा मत करो, ऐसा तो हम नहीं सिखाते कि जो दोष पनप रहे हैं, वह पनपते चले जाएँ। यह तो हम नहीं कहेंगे कि तुम दबती हुई चली जाओ, पर यह जरूर कहेंगे कि उसके दोष और दुर्गुण धोने के लिए भरसक प्रयास जरूर करो; लेकिन अपनी

जीभ में मिठास बनाए रखो। जबान को कटुता की ओर मत चलने दो। कटुता की ओर आपकी जबान चली नहीं कि हमारी घर-गृहस्थी बिगड़ती ही चली जाती है।

तुम्हें मालूम नहीं है कि हमारी सास यह कहा करती थीं कि सास मिट्टी की भी बुरी होती है। भगवान करे सास तो किसी को दे ही नहीं; क्योंकि वह जब-जब आती है, बहू को कुछ-न-कुछ कुचियाती रहती है कि तेरे बाप ने यह नहीं दिया

अनेकानेक दोष-दुर्गुणों, कषाय-कल्मषों का वर्गीकरण, विभाजन करने पर उनकी संख्या हजारों में हो सकती है। पर उनके मूल उद्गम यही तीन—लोभ, मोह और अहंकार हैं। इन्हीं भवबंधनों से मनुष्य के स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर जकड़े पड़े हैं। इनका उन्मूलन किए बिना आत्मा को उस स्वतंत्रता का लाभ नहीं मिल सकता, जिसे मोक्ष कहते हैं।

— परमपूज्य गुरुदेव

और तेरी माँ ने यह नहीं सिखाया और तू ऐसी कुलक्षणी है, हजार नुक्स उसमें निकालते हुए चली जाएगी।

अरे, तू किस मतलब की दवा है। इतनी बड़ी पढ़ी-लिखी लड़की तुझे इसलिए सौंपी थी कि प्यार से बता देना और मुँह से यह दो शब्द कहना कि बेटा! ऐसे काम नहीं होता है, ऐसे कर लिया कर। ऐसे करोगी, तो मुझे अच्छा लगेगा। थोड़े दिन

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

बिगड़ेगा, बेटा! फिर ठीक हो जाएगा। आज नमक ज्यादा हो गया है, तो यह थोड़ी न है कि आज नमक ज्यादा हो गया, तो हमेशा पड़ेगा। उसको नाप से बता दो कि देखो बेटा! इतनी दाल में इतना नमक पड़ता है, इस हिसाब से डाल दिया कर। वह डाल दिया करेगी।

बहू को हम अवज्ञाकारी कब बनाते हैं, जब हम यह मानकर चलते हैं कि यह सौतन है और सौतन का डाह तो होता ही है। आप यह जानते हैं कि जब से ब्याह हुआ, तो बेटा! बहू का हो गया। पहले हमारे घुटने के पास बैठा रहता था और अब बहू के पास रहता है, प्यार तो बँटेगा ही। पहले माँ के पास था, अब पत्नी के पास या फिर बच्चे हो जाएँगे, तो उनके पास, फिर और आगे बढ़ेगा, समाज में बँटेगा, सारे राष्ट्र में बँटेगा। प्यार तो बँटेगा-ही-बँटेगा। आप ऐसा कैसे सोच रहे हैं? आप ऐसा मत सोचिए।

आने वाला समय नारी का है

आप हर सदस्य को ऊँचा उठाती हुई चली जाओ, अपनी मानसिकता को ऊँचा उठाओ। आप पढ़ी-लिखी हो, तो आप स्वाध्याय करो, दूसरों को स्वाध्याय कराओ, उन्हें पढ़ाओ। जो बगैर पढ़ी-लिखी महिलाएँ हैं, उनको संस्कार दो; ताकि नारी जाति हमारी ऊँची उठे और जो हमारा राष्ट्र है, आगे आने वाला समय है, सब जगह पूरे राष्ट्र पर सारे-के-सारे क्षेत्र में हमारी लड़कियाँ ही छा जाएँ, तो कोई अचंभे की बात नहीं हो सकती है।

हाँ, कोई हिम्मत करे, तो बिलकुल ऐसा हो सकता है। मध्य प्रदेश की एक लड़की थी, वह सौ मंत्रियों के बीच में घुस जाए, अपने आप सबके पास धड़ल्ले से चली जाए। मैं कहती थी कि वहाँ तेरे कोई रिश्तेदार हैं? नहीं माताजी, रिश्तेदार तो कोई नहीं है। उसका स्वभाव ऐसा है, जो कहीं भी

जाकर के धड़ल्ले से काम करा ही लेवे। बेटा! आप में से हरेक में भी ऐसी ही हिम्मत होनी चाहिए। आप दब करके अपनी मानसिकता को दबा न लें।

एक तो फैशनपरस्ती नहीं होनी चाहिए। फैशन से यह मालूम पड़ता है कि यह चाहती है कि सब हमारी ओर देखें कि हम कैसी लगती हैं? उस फैशन को तिलांजलि दो। एक बार कई लड़कियाँ मिल करके बापू के पास गईं और उनसे यह कहा— बापू! हमें लड़के छेड़ते हैं। लड़के बड़े खराब हैं, बहुत बदमाश हैं। इनसे ज्यादा उद्दंड कोई है ही नहीं; पर बेटा, तुम एक काम करना कि कल तुम जब आओ न, तो सारे सिर पर उस्तरा फिरवा के आना और फिर देखना कौन-सा गुंडा तुम्हें छेड़ता है। एक भी नहीं छेड़ेगा।

फैशनपरस्ती त्याग दें

अरे बाबा! यहाँ से बाल कतर, वहाँ से कतर, कपड़े कतर, जिसे देखो ऐसा ही नजर आएगा। यहाँ भी लाल, वहाँ भी पीला, खैर यहाँ तो कोई नहीं है, यह सब ठीक शालीन बैठी हैं, पर बाहर लड़कियों की पोशाकों को देखो, तो हैरान हो जाते हैं कि जाने यह कौन है—लड़की है या लड़का? यह बवाल कौन है? उनकी चाल-ढाल देखते ही बनती है।

टी०वी० और सिनेमा देख-देख करके हमारे बच्चों का क्या हाल हो रहा है? इनको घर में कौन बनाएगा? इनको घर में माँ बनाएगी। माँ खुद जब फैशन करेगी, तो फिर बच्चे क्यों नहीं करेंगे। मैं तो देखती हूँ कि बाहर से महिलाएँ आती हैं और यहाँ हिंदुस्तान से भी आती हैं। पैट पहने रहेंगी, बूढ़ी-बूढ़ी होंगी, दाँत निकल रहे होंगे और फैशन के मारे मरी जा रही हैं। जब यह इतना कर रही हैं, तो फिर बच्चे क्यों नहीं करेंगे?

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

भगवान अब आपके सफेद बाल बना रहा है, तो बनने दो न सफेद बालों को, जो चाँदी जैसे लगते हैं। औरों के काले-कलूटे कैसे बुरे लगते हैं। हमारे बाल देखो कैसे सफेद होते चले गए, जो और भी ज्यादा बढ़िया लगते हैं। काले-कलूटे बालों में क्या रखा है? कुछ नहीं है। उनमें कब तक रंग भरती रहोगी, काले करती रहोगी, यह दिखाने के लिए कि साहब! अभी हम बूढ़े नहीं हुए हैं। अभी हम जवान हैं और यही सोचते रहते हैं कि हमारा सम्मान होगा।

बड़े-बूढ़ों का सम्मान होता है कि नहीं होता, बुजुर्गों का सम्मान होता कि नहीं होता है। अब वह जो बुजुर्ग नहीं हैं, उनका सम्मान नहीं होता है क्या? मैंने कहा—अरे, यह खाली खोपड़ी का है, इसे क्या अनुभव है? अपने घर में हम फैशनपरस्ती का सामान न रखें; ताकि हमारे बच्चे फैशन की ओर न चले जाएँ।

पाश्चात्य सभ्यता न अपनाएँ

हमारे बच्चे पाश्चात्य सभ्यता की ओर बढ़ते हुए जा रहे हैं, बड़े दुःख की बात है। बड़े शर्म की बात है कि हमारे बच्चे पाश्चात्य सभ्यता की ओर अग्रसर होते जा रहे हैं। हमारे बच्चे सभ्य-शालीन बनते हुए चले जाएँ आगे इनको आपको बनाना है, आपको इन्हें विनोबा जैसे बनाना है।

यह तीन भाई हुए हैं—विनोबा भावे, बालकोबा भावे और विठोबा भावे और तीनों एक से बढ़कर एक संत थे। इनके ऊपर था—उनकी माँ का हाथ। माँ ने ही उनको संस्कार दिए थे। आप अपने बच्चों को संस्कार दीजिए।

रोज उनसे गायत्री मंत्र कहलवाइए, छोटे बच्चे हैं, तो छोटों से कहलवाइए, बड़े हैं, तो बड़ों से कहलवाइए और उनसे बोलिए कि नाश्ता तब

मिलेगा, जब पहले गायत्री मंत्र बोलेंगे। नहीं साहब! पहले बेड-टी पिएँगे, बेड-टी नहीं मिलेगी। पहले उठो और फ्रेश हो जाओ, जाकर मुँह-हाथ धोकर दाँत साफ करो, फिर इनको नहलाओ, नहलाते नहीं बनता हो, ठंडक हो, तो उनके कपड़े बदलवा करके, फिर उनसे कहिए कि आप गायत्री मंत्र बोलो। गायत्री मंत्र कम-से-कम पाँच बार तो बुलवाओ।

बच्चों को संस्कार दीजिए

कुछ तो कराइए, उनके संस्कार बनाइए। उनको प्रणाम कराइए, माता-पिता को प्रणाम कराइए, बुजुर्गों को प्रणाम कराइए; ताकि वह प्रणाम करना सीखें। इससे मन में जो मलिनता होती है, वह भी धुलती हुई चली जाती है। कहीं कोई गलती होती है, तो वह भी चली जाती है। तो अपनी सास की बात बता रही थी कि हमारी सास यह कहा करती थीं कि मैंने रोटी जो खाई है या तो मैंने अपनी माँ के हाथ की रोटी खाई है या मैंने इसके हाथ की रोटी खाई है। क्या बात थी?

सब मेरे हाथ में है। मैंने तो उनकी माँ को देखा भी नहीं था। मैंने तो इनकी माँ को देखा और यह समझा कि यह रोटी कैसे पकाती हैं, देखती रही। बस, जैसा वे कर रहीं थीं, वैसे ही करना शुरू कर दिया और उनको मन भा गया। मेरे बगैर उनको चैन नहीं पड़ता था। कहीं भी कथा सुनने जाती थीं, तो वहाँ से आकर के मुझे मालूम पड़ता था कि ताईजी आ रही हैं। सब लोग उन्हें ताईजी कहते थे।

जल्दी से अपने घर का काम, चौका-बरतन, रोटी जो भी होती है, जल्दी बना लेते कि वे आएँगी, तो जितनी देर कथा सुनकर आई हैं, उतनी देर कथा सुनाएँगी और वे सुनाती थीं। ज्यादा पढ़ी-लिखी तो नहीं थीं, थोड़ा-थोड़ा एकाध अक्षर जानती

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

रहीं होंगी; लेकिन बुद्धि उनकी ऐसी थी कि वे अक्षरशः पूरी कथा को कह जाती थीं।

आवाज उनकी इतनी बुलंद थी कि कोई गीत गाने को उन्हें कह दिया जाए, तो पहले ढोला-बोला से जाने क्या-क्या चला करते थे? जब वे गाती थीं, तो लगता था कि उनकी आवाज, तो कोई एक मील भर जाएगी। ऐसी बड़ी बुलंद आवाज थी।

पूज्य गुरुदेव की देवतुल्य माँ

एक बार वे गा रहीं थीं और चक्की चला रही थीं। सुबह कौन-सा एक गीत होता है, इधर बुंदेलखंड में होता है, मुझे अभी इस समय याद नहीं है, तो वे जोर से गा रहीं थीं और लोढ़ी लेकर के ऐसे जोर से मारा कि चक्की के पत्थर के दो टुकड़े हो गए।

उनकी सास लड़ती हुई आई और बोलीं—यह तूने क्या किया? आल्हा-ऊदल बड़े लड़ैया गा रही थीं। सो आल्हा-ऊदल गाते हुए उनको जोश आ गया, सो हथौड़े से लोढ़ी मार दी और भड़ाक से उसके दो टुकड़े हो गए। वे बड़ी बुद्धिमान थीं और बड़ी सभ्य और शालीन थीं। ऐसी देवी तो शायद ही कोई होगी, ऐसी देवतुल्य थीं वे। त्रिकालसंध्या भी चलती थी। वही सारे गुण गुरुजी में आते हुए चले गए। बेटी, यही आप भी करना कि आपके बच्चों में अच्छे गुण आते हुए चले जाएँ, बस, इन्हीं शब्दों के साथ अपनी बात समाप्त करती हूँ। मैंने समर्पण की बात कही, आपसे और कई बातें कही हैं, इन पर आप ध्यान देना।

॥ शांति: ॥

महाराष्ट्र में एक रंगुजी नामक व्यक्ति रहा करते थे। वे अनेक गुरुओं के पास भटकते-भटकते संत तुकाराम के पास पहुँचे और उनके शिष्य बनकर वहीं रह गए। संत तुकाराम निरंतर भगवद्भक्ति में तल्लीन रहा करते थे। दिनों गुजर जाते, पर उनसे वार्त्तालाप नहीं हो पाता। रंगुजी को लगा कि उन्हें यहाँ भी कुछ मिलने वाला नहीं है। अतः वे संत तुकाराम का आश्रम छोड़, गुरु रामदास के पास चले गए और उनसे उन्हें शिष्य बनाने की प्रार्थना की। गुरु रामदास बोले—“तुम तो संत तुकाराम के पास रहते थे। उन्हें छोड़कर यहाँ क्यों चले आए?” रंगुजी बोले—“मैं तीन वर्षों से उनके पास हूँ, परंतु संत तुकाराम ने मुझसे कभी ज्यादा देर बात नहीं की। वे तो सारे दिन ध्यान में ही तल्लीन रहते हैं। मैं उनसे तत्त्वज्ञान कब ले पाता?”

गुरु रामदास ने उत्तर दिया—“पुत्र! सबका अपना-अपना मत है। लेने और न लेने का भाव तो ग्राहक का भाव है, शिष्य का नहीं। शिष्य का भाव तो समर्पण है और किसको कितना मिलता है, यह तो उसकी पात्रता पर निर्भर है। जहाँ तक संत तुकाराम का प्रश्न है तो वे तुझसे बिना बोले भी तुझे लगातार उपदेश देते रहे, पर तू उसे कभी ग्रहण नहीं कर पाया। सतत ईश्वरभक्ति करते हुए वे यही तो उपदेश दे रहे हैं कि तू भगवान का भजन कर, प्रमाद मत कर, जीवन का एक भी क्षण व्यर्थ न जाने दे।” रंगुजी गुरु रामदास की बात में निहित मर्म समझ गए और संत तुकाराम के पास वापस लौट गए। समर्पण के साथ शिष्य धर्म का पालन करते हुए वे कालांतर में महान भक्त कहलाए।

► ‘नारी सशक्तीकरण’ वर्ष ◀

धरती पर प्रकाश की प्रतीक्षा



धरती पर प्रकाश की प्रतीक्षा है। सभी के जीवन का आधार यही है। जलचर, थलचर, नभचर सभी जीव इसी से, इसी के वातावरण में अपना रक्षण-पोषण पाते हैं। प्राणियों की असंख्य प्रजातियों के साथ वृक्ष-वनस्पतियों की अनेकानेक प्रजातियों के जीवन को धरा ही धारण करती है। तभी तो इसका एक नाम धरिणी है। धरती कब से, कहाँ से है—इस बारे में दार्शनिक, वैज्ञानिक अपने-अपने ढंग से विचार करते रहे हैं। इनके मतों में कहीं समानता है, तो कहीं भिन्नता। भारतभूमि के ऋषि-महर्षियों ने भी इस पर विचार किया है। आधुनिक वैज्ञानिकों की भाँति उनका भी यही मानना रहा है कि पृथ्वी सूर्य से जन्मी है। अथर्ववेद के एक मंत्र में कहा गया है—‘बाहुच्यता पृथिवी द्यामिवोपरि’ अथर्व० 18.3.25 से 35—हाथ से गिरी हुई वस्तु के तुल्य पृथ्वी सूर्य से निकली है।

वैज्ञानिकों एवं ऋषियों की समान मान्यता का समान सच यह भी है कि धरती पर जीवन का केंद्र, जीवन के सभी आयामों में जीवन-ऊर्जा, प्राण व प्रकाश का स्रोत सूर्य ही है। सूर्य से जन्मी धरती, प्रकाश के स्रोत से ही जिसकी उत्पत्ति हुई—आज उसी को प्रकाश की प्रतीक्षा है। ऐसा नहीं है कि अब धरती पर रोज-रोज सूर्योदय नहीं होता। सूर्योदय तो नित्यप्रति होता है। सभी को जीवन भी मिलता है, इसमें प्रकाश की किरणें भी प्रवेश करती हैं। औंधियारा है तो केवल जीवनशैली में, जीवन जीने के तौर-तरीकों में। ये सभी जीवन-विधियाँ अपने बदले और बिगड़े तौर-तरीकों के कारण जीवन के सभी रूपों को रुग्ण और व्यथापूर्ण बना रही हैं।

इस स्थिति को निहारकर-देखकर-परखकर ही तो युगऋषि परमपूज्य गुरुदेव ने संकल्प किया था—‘नया सवेरा-नया उजाला इस धरती पर लाएँगे’ क्योंकि उन्होंने जान लिया था कि धरती पर जीवन तो है, पर जीवन जीने की कला खो गई है। जीवन का संगीत, सौंदर्य एवं सुगंध कहीं लुप्त हो गया है। यहाँ पर विद्या-कला और विज्ञान के रूप अनगिनत हैं। सभी एक से बढ़कर एक हैं। सबकी अपनी बढ़ाई और बड़प्पन है। सभी की

आज जीवन-विद्या कहीं दिखाई नहीं देती। जीवन जीने के तौर-तरीके, सलीके, साथ-साथ रहने की सामर्थ्य, प्रेम-सौहार्द, आत्मीयता व अपनत्व के सभी जीवनमूल्य, जिनसे धरती में फिर से खुशहाली-हरियाली वापस लौट सकती है, वह सब नदारद है।

अपनी विशेषताएँ एवं चमत्कार हैं, लेकिन इन सबके बीच जीवन-विद्या कहीं दिखाई नहीं देती। जीवन जीने के तौर-तरीके, सलीके, साथ-साथ रहने की सामर्थ्य, प्रेम-सौहार्द, आत्मीयता व अपनत्व के सभी जीवनमूल्य, जिनसे धरती में फिर से खुशहाली-हरियाली वापस लौट सकती है, वह सब नदारद है।

गणना की जाए तो प्राकृतिक व मानवीय कारणों के कारण, इतिहास व भूगोल की बदलती दशाओं के साथ धरती पर बसे देशों की संख्या

► ‘नारी सशक्तीकरण’ वर्ष ◄

195 से 203 तक जा पहुँचती है। इस गणना को और घटा दें, तो समूची धरती सात महाद्वीपों में बँटी और बसी है। वैज्ञानिकों ने अपने ढंग से इसकी नाप-जोख करके इसका तल क्षेत्रफल 51,00,72,000 वर्ग किलोमीटर निश्चित निर्धारित किया है। उनके अनुसार इसमें से 29.2 प्रतिशत यानी कि 14,89,40,000 वर्ग किलोमीटर भूमि है और 70.8 प्रतिशत यानी कि 36,11,32,000 वर्ग किलोमीटर जल है। पता नहीं किस तराजू से वर्तमान युग के विज्ञान विशेषज्ञों ने इसका वजन भी तौल लिया है। उनका कहना है इसका द्रव्यमान 5972×10^{24} किलोग्राम है। बात इसके सौर द्रव्यमान की करें, तो यह 3×10^6 है।

इस माप-तौल, इस नाप-जोख के बावजूद, इतनी लंबी-चौड़ी गणितीय-गणना के साथ भी धरती—धरतीवासियों के जीवनयापन के लिए शायद कम पड़ने लगी है, तभी तो धरती से बाहर दूसरे ग्रहों में रहने के लिए जगह तलाशी जा रही है। सुना है कि अब तो कहीं-कहीं वहाँ के भूखंडों की रजिस्ट्री भी होने लगी है। यहाँ अपने सगे-भाइयों में, पड़ोसियों के बीच पड़ोसी और दूर के देशों के साथ युद्ध लड़ने वाले हम सब वहाँ जाकर, वहाँ बसकर जीवन की कौन-सी गुणवत्ता तलाशेंगे?—यह तो शायद विधाता ही जानता होगा, शायद वह भी नहीं।

अपनी सभ्यता, संस्कृति और ज्ञान-विज्ञान का दंभ-अभिमान करने वाले हम सभी धरतीवासी अभी तक यह भी नहीं जान पाए कि समस्या जीवन में नहीं है, जीवन जीने के ढंग में है। यदि समूची धरती में जीवन के लिए उपयोगी संसाधन ढूँढ़ें और गिने जाएँ, साथ में जीवन की जरूरतों का ब्योरा इकट्ठा किया जाए, तो इनमें किसी को कोई कमी न पड़ेगी। बस बात साथ-साथ मिल-जुलकर

रहने की है। अपने-अपने सुख-साधनों, संसाधनों का मिल-बाँटकर उपयोग करने की है।

पर यहाँ तो रीति ही उलटी है। न जाने किस आवेग एवं आवेश में हम सब एकदूसरे का पोषण करने के बजाय एकदूसरे का शोषण करने की जुगत खोजते रहते हैं। अब यह नीति केवल इनसानों तक सीमित नहीं रही। इनसानों ने अपनी इस नीति का विस्तार पशु-पक्षियों, वृक्ष-वनस्पतियों, जल और वायु तक बढ़ा लिया है।

अब स्वर्गीय सुख पाने के लिए किसी सुदूर स्वर्ग में प्लैट, मकान, भूमि अथवा भूखंड खोजने-खरीदने की आवश्यकता नहीं है; क्योंकि हमारी अपनी धरती में ही स्वर्ग अवतरित होने को है। बस, हमें इसके सदुपयोग-उपयोग एवं प्रयोग के लिए स्वयं में देववृत्ति, दैवी संपदा एवं देवत्व के उदय के विकास के लिए प्रयास करना होगा। यदि हम जीवन जीना सीख लें, जीवन को प्रकाशित करने में तत्पर हो जाएँ, तो हमारी धरती माता हमें सब कुछ दे सकने में समर्थ है।

और अधिक दूर तक न सही, केवल भूमि के भूतल की ही बात करें, तो धरती पर कई तरह की मिट्टी पाई जाती है। अकेले भारत की भूमि में आठ तरह की मिट्टी पाई जाती हैं, जिनकी उर्वरक क्षमता अलग-अलग है। हम सबकी जीवन-नीति के कारण अब ये भी अपनी उर्वरक क्षमता, उपज क्षमता खोने लगी हैं। इसका परिणाम यह हो रहा है कि भूमि-पुत्र आत्महत्या करके मरने लगे हैं।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

अनेकों का भरण-पोषण करने की सामर्थ्य रखने वाले लोग अब स्वयं ही भरण-पोषण में अपने को असमर्थ पा रहे हैं।

युगऋषि गुरुदेव ने धरती और धरती पर बसे जीवन की इस समस्या पर बड़ा व्यापक चिंतन किया था। परिदृश्य, परिस्थिति, परिवेश के बारे में उनकी चिंता भी बहुत सघन थी। उनका कहना था कि धरती पर जीवन भले ही कितने ही रूपों में क्यों न हो, पर इनमें से मानव जीवन ही सबसे ज्येष्ठ और श्रेष्ठ है। वही ईश्वर का राजकुमार है। उसी पर रक्षण व पोषण का दायित्व है। परिदृश्य, परिस्थिति, परिवेश एवं पर्यावरण को परिवर्तित करने के लिए उसी को साधन और साधना की ऊर्जा जुटानी पड़ेगी। आध्यात्मिक दृष्टि से ही सुखी सृष्टि संभव है। इसके लिए न तो विचारों की कमी है और न ही विचारशीलों की। ज्ञान भी बहुत है, ज्ञानी भी बहुतेरे हैं। पुस्तक और पुस्तकालय भी पर्याप्त हैं और अब तो इंटरनेट के युग में फोन खोलते ही ज्ञानवृष्टि, विचारवृष्टि होना शुरू हो जाती है।

इन सब स्थितियों के बीच समस्या यह है कि ज्ञान देने की चाहत सभी में है, लेकिन ज्ञान पाने की चाहत रखने वाले बहुत कम हैं। विचारवानों के वर्चस्व वाली धरती में आचरणवान कम हैं। प्रवचन का मनोरंजन-व्यवसाय करने वाले अनेकों हैं, पर विचार व ज्ञान पर मनन करके आचरण में जीवन में उतार सकने वाले नगण्य हैं। यही है धरती पर प्रकाश का अभाव। और यही है—आसुरी अंधेरे

का प्रभाव, जिसको हटाना और मिटाना है। भगीरथ ने जल के महत्त्व पर न तो प्रवचन पढ़े थे और न लेख लिखे थे। उन्होंने कठोर तप करके गंगा-अवतरण संभव किया था। भगवान शिव ने कब विष के दुर्गुणों को गिनाया था, उन्होंने तो स्वयं को संकटों में डालकर उस महाविष का पान करके शमन किया था।

परमपूज्य गुरुदेव ने इन सौ वर्षों में ऐसा ही कुछ किया है। उन्होंने महातप करके महर्षि दधीचि की भाँति अपनी अस्थियों से ऐसा महावज्र तैयार किया है, जो असुरों और असुरता का ध्वंस करने में समर्थ है। उनकी शतवर्षीय साधना के कारण धरती पर प्रकाश की प्रतीक्षा अब समाप्त होने को है। नया सवेरा, नया उजाला लाने का संकल्प अब साकार होने को है। हम धरा-धामवासियों को भी उनका सहयोग करना है।

अब स्वर्गीय सुख पाने के लिए किसी सुदूर स्वर्ग में फ्लैट, मकान, भूमि अथवा भूखंड खोजने-खरीदने की आवश्यकता नहीं है; क्योंकि हमारी अपनी धरती में ही स्वर्ग अवतरित होने को है। बस, हमें इसके सदुपयोग-उपयोग एवं प्रयोग के लिए स्वयं में देववृत्ति, दैवी संपदा एवं देवत्व के उदय के विकास के लिए प्रयास करना होगा। यदि हम जीवन जीना सीख लें, जीवन को प्रकाशित करने में तत्पर हो जाएँ, तो हमारी धरती माता हमें सब कुछ दे सकने में समर्थ है। इसके भूतल पर ही नहीं, भूगर्भ में भी रहस्यमय रत्न-भंडार भरे पड़े हैं। □

दूरवर्ती अनजान लोग किसी की वाचालता पर सहज विश्वास नहीं करते और जो मन, वचन, कर्म से आदर्शों के प्रति समर्पित हों, ऐसे लोग ढूँढ़े नहीं मिलते। कठिनाई यही दूर करनी है। स्रष्टा की दिव्य चेतना का अवतरण इन्हीं दिनों इस प्रकार होना है, जिसमें भावनाशील लोग अपनी कुत्सा-कुंठाओं पर विजय प्राप्त करें और ब्राह्मणोचित जीवन अंगीकार कर अपने समग्र व्यक्तित्व से लोगों को उत्कृष्टता की पक्षधर आदर्शवादिता पर विश्वास दिला सकें।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

आत्मपरिष्कार का पथ

मनुष्य का स्वभाव है कि उसे जो वस्तु औचक व बिना किसी विशेष प्रयत्न के मिल जाती है, वह उसका मूल्य भाँपने से वंचित रह जाता है। यदि किसी को बिना किसी परिश्रम के भोजन की प्राप्ति होने लगे, बिना भाग-दौड़ के आजीविका की पूर्ति होने लगे तो उसके लिए उन उपहारों का मूल्य समाप्त ही हो जाएगा। दुर्भाग्य से वर्तमान में मनुष्य ने मानवीय जीवन को इसी दुर्गति की श्रेणी में रख दिया है।

मनुष्य जीवन, जिसे शाश्वत, ज्ञानी, अवतार से लेकर वैज्ञानिक तक—स्रष्टा की तिजोरी का सर्वोपरि उपहार बतलाते हैं, वह बहुमूल्य जीवन अधिकतर मनुष्यों के लिए पेट-प्रजनन की आवश्यकताएँ पूर्ण करने, प्राकृतिक व शारीरिक उत्तेजनाओं के वशीभूत होकर निरर्थक भटकने की प्रक्रिया में ही समाप्त हो जाता है।

जीवन मनुष्य हर घड़ी जीता है, पर न तो उसके प्रति समग्र बोध उसके मन में विकसित हो पाता है और न ही वह उसकी गरिमा व मर्यादा से परिचित हो पाता है। जब तक जीवन के प्रति सही समझ विकसित होती है, तब तक चलने का समय आ जाता है और परमात्मा से मिला यह अनुभव उपहार, नादानी की भेंट चढ़ जाता है।

मनुष्य जन्म का आशीर्वाद मिलने के पीछे सोच यही रखी गई थी कि मनुष्य प्राप्त जीवन का श्रेष्ठतम उपयोग करेगा। अपनी क्षुद्रताओं, संकीर्णताओं को भुलाकर श्रेष्ठताओं की ओर अग्रसर होगा, पाशविक प्रवृत्तियों-कुसंस्कारों की परतों

को धोकर उत्कृष्टताओं व सत्प्रवृत्तियों को व्यक्तित्व का अंग बनाएगा, आत्मपरिष्कार की साधना में निरत रहते हुए लोक-मंगल का पथ सशक्त करेगा। मानवीय जीवन की गरिमा इसी में है।

ऐसे मनुष्य ही जीवन में आंतरिक संतुष्टि व लौकिक शांति के अधिकारी बनते हैं। इन्हें ही देवमानवों की श्रेणी में रखा जाता है, मात्र अपने निर्वाह की सोचने वाले और अपने परिवार के स्वार्थ की पूर्ति करने वाले स्वार्थ की सीमाओं में सिमटकर पतन के गर्त में जा गिरते हैं।

आंतरिक भर्त्सनाएँ, ग्लानि-हीन भावना के प्रहार, संकीर्णताओं का शोरगुल व वर्जनाओं का उन्माद—उन्हें नर-पशु की श्रेणी में ला खड़ा करता है। ऐसा जीवन, वरदान की जगह अभिशाप बन जाता है और एक कीमती अवसर गँवाकर मनुष्य, अंधकार के गहरे तलों में जा पहुँचता है। ऐसी दशा में मनुष्य को मानवीय जीवन के प्रति सही सोच विकसित करने की आवश्यकता है नहीं तो भटकावों के जंगल में खोते देर नहीं लगती।

सामान्य मनुष्य यह सोचता है कि इसका संदर्भ—आध्यात्मिक साधनाओं से है। यह सत्य है कि तत्त्वज्ञान के लिए, आत्मबोध के लिए—गूढ़-गंभीर रूप साधनाओं की आवश्यकता पड़ती है। इसके साथ यह भी सच है कि ऐसे में अन्यत्र भटकने की जगह जीवन को ही देवता मानकर उसी की उपासना-आराधना कर लेने से वे सारी सिद्धियाँ हस्तगत हो सकती हैं, जिन्हें हम आध्यात्मिक कायाकल्प का आधार मानते हैं।

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

अध्यात्म कर्मज्ञान के विशेषज्ञ मानवीय जीवन को श्रेष्ठ और प्रेम का अधिकारी बनाने के लिए अनेकानेक प्रणालियाँ बताते हैं। ज्ञान, कर्म, भक्ति, तप, दान, जप से लेकर अनेकानेक पद्धतियाँ विश्व के सभी धर्मों-शास्त्रों में दी गई हैं, परंतु यदि उन सबका गंभीरतापूर्वक विश्लेषण किया जाए तो यह अनुभव करते देर नहीं लगती कि ये सब प्रणालियाँ आत्मपरिष्कार का ही प्रतिपादन हैं।

पात्रता का विकास, योग, प्रखरता का अभिवर्द्धन—तप, विवेक की स्थापना—ज्ञान,

समर्पण का चरमोत्कर्ष भक्ति, ये सब आत्मपरिष्कार के बिना संभव नहीं।

आत्मपरिष्कार ही अध्यात्म और अध्यात्म ही जीवन देवता की साधना-आराधना है। जीवन के प्रति सही सोच रखने से, ये भाव रखने से कि हम जीवन को परमात्मा का दिया हुआ उपहार समझकर उसका श्रेष्ठतम उपयोग करें—मानवीय जीवन की गरिमा के साथ न्याय हो पाता है अन्यथा जन्म-जन्मांतरों तक भटकन के सिवा कुछ हाथ नहीं लगता।

□

भाई ने बहन की ओर कृतज्ञ निगाहों से देखा। भाई पढ़ने-लिखने में कुशाग्र था, पर उसके पिता एक नाव चलाते थे, जिससे प्राप्त पैसों से घर का गुजारा जैसे-तैसे चल पाता था।

आज का दिन परिवार के लिए बेहद गौरव का दिन था और विषाद का भी। अपनी मेहनत, लगन और प्रतिभा के कारण भाई का चयन एम०आई०आई०टी० में हो गया था, पर प्रवेश के लिए 1000 रुपयों की आवश्यकता थी, जिसकी व्यवस्था कर पाना उसके परिवार के लिए असंभव-सा था। ऐसे में उसकी बहन ने अपनी सोने की चूड़ियाँ और गहने बेचकर अपने भाई की फीस का इंतजाम किया।

भाई ने बहन को उपकृत निगाहों से देखा और कहा—“बहन! एक दिन तुम्हारा भाई इस उपकार का ऋण भारत के सर्वोच्च पद पर पहुँचकर चुकाएगा।”

काल बड़ा बलवान है। समय गुजरा तो वो भाई, जिसे हम सभी अब्दुल कलाम जी के नाम से जानते हैं, भारत गणराज्य के राष्ट्रपति बने।

आज उनकी ऊँचाइयों में उनकी बहन के त्याग के पंख लगे हुए हैं।

► ‘नारी सशक्तीकरण’ वर्ष ◀

शांतिकुंज ही क्रांतिकुंज

शांतिकुंज ही क्रांतिकुंज, गुरुवर ने जिसे बनाया है।
चुन-चुनकर हीरे मोती से, इसको जीवंत बनाया है ॥

ऋषियों का तप-तेज यहाँ, बनकर आशीष बरसता है।
आरण्यक और गुरुकुल जैसा, वातावरण सरसता है ॥
धरती को स्वर्ग बनाने का, संकल्प यहीं विकसाया है।
यह शांतिकुंज ही ॥

जलता अखंड है प्राणदीप, जो महाकाल की आभा है।
गर्भरूप में माताजी का, सूक्ष्मरूप यह आँवा है ॥
इस परम नीड़ को माताजी, गुरुवर ने स्वयं सजाया है।
यह शांतिकुंज ही ॥

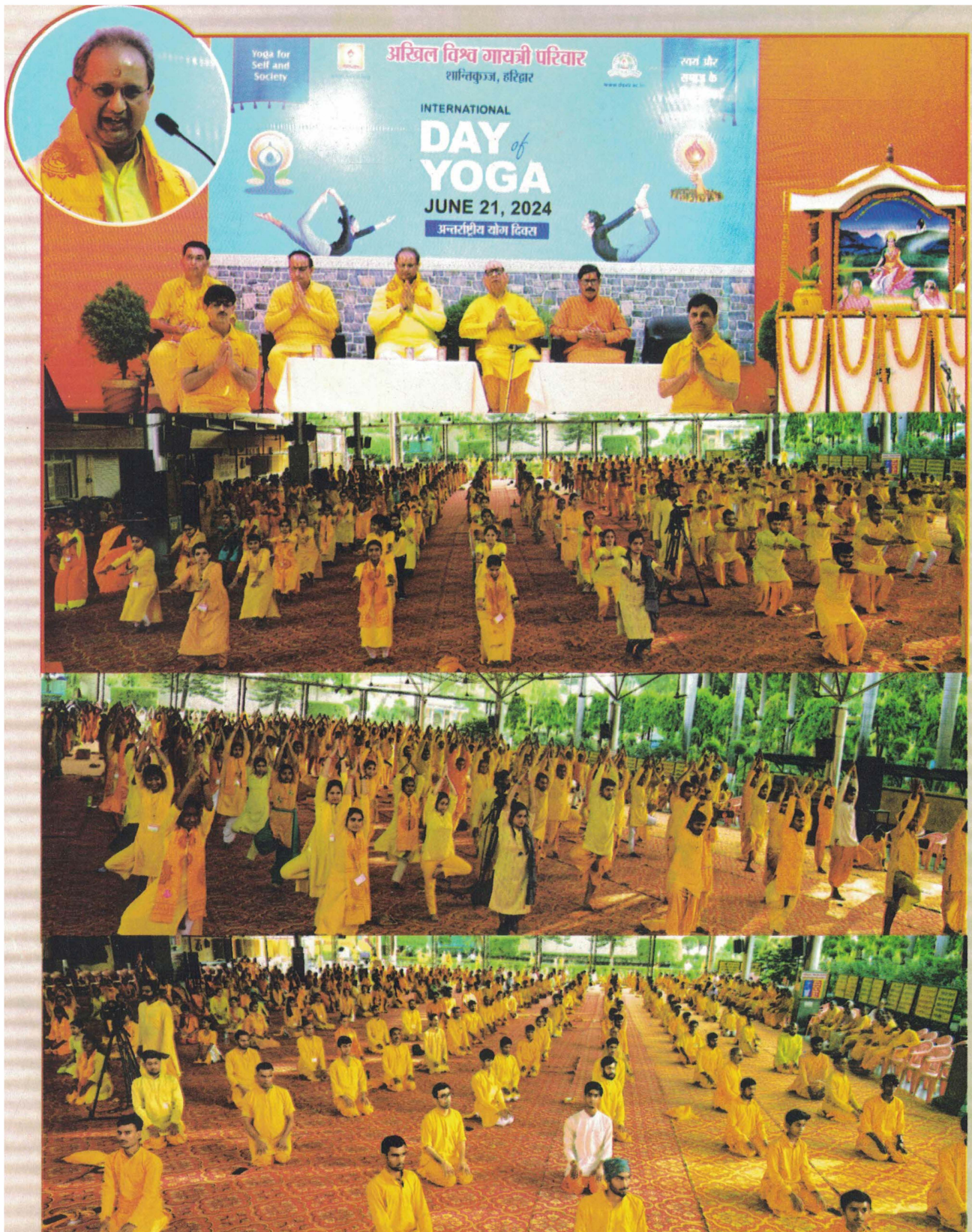
हम महाकाल की संतानें, हमको नहीं किसी से डरना है।
हम करें प्राण संचय तप कर, हमको आगे ही बढ़ना है ॥
उन महाप्राण ने प्राणों की, अग्नि में स्वयं तपाया है।
यह शांतिकुंज ही ॥

सघन तमिस्रा छाई है, अज्ञान असुर चढ़ आया है।
हे महाकाल की आद्यशक्ति, जागो संकट गहराया है ॥
धरती माँ का है आह्वान, संस्कृति ने तुम्हें बुलाया है।
यह शांतिकुंज ही..... ॥

हम करें प्रार्थना जन-जन से, सबको ही वृक्ष लगाना है।
अंतिम साँसें ले रही धरा, उसको जीवंत बनाना है ॥
हम भूमिपुत्र हैं माता के, नैतिक संकल्प उठाया है।
यह शांतिकुंज ही ॥

—मंगल सिंह

► 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄



अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस में शांतिकुंज के अंतःवासी परिजन एवं शिविरार्थीगणों की भागीदारी

अखण्ड ज्योति
(मासिक)
R.N.I. No. 2162/52



www.awgp.org

प्र. ति. 01-08-2024

Regd. No. Mathura - 025/2024-2026

Licensed to Post without Prepayment

No. : Agra/WPP - 08/2024-2026



फकीर सिंह खालसा के आठवें वंशज निहंग समाज के प्रतिनिधि बाबा हरजीत सिंह रसूलपुर जी अयोध्या राम मंदिर लंगर वाले के प्रमुख जत्थेदार और निहंग समाज से लगभग 45 सदस्यों का युगतोर्थ एवं देव संस्कृति विश्वविद्यालय में आगमन

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक-मृत्युंजय शर्मा द्वारा जनजागरण प्रेस, बिरला मंदिर के सामने, जयसिंहपुरा, मथुरा से मुद्रित व अखण्ड ज्योति संस्थान, बिरला मंदिर के सामने, मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा-281003 से प्रकाशित। संपादक-डॉ. प्रणव पण्ड्या।

दूरभाष — 0565- 2403940, 2972449, 2412272, 2412273

मोबाइल — 09927086291, 07534812036, 07534812037, 07534812038, 07534812039

ई-मेल — akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org